गाँव की कुर्सी

गाँव की कुर्सी

सरपंच के अधिकार, कर्तव्य और काम करने की असली विधि: भारतीय पंचायतों के लिए संपूर्ण मार्गदर्शिका

Sushil Choudhary

Inkora Press

Copyright © 2026 Sushil Choudhary

All rights reserved.

No part of this publication may be reproduced, distributed, or transmitted in any form or by any means, including photocopying, recording, or other electronic or mechanical methods, without the prior written permission of the publisher, except in the case of brief quotations embodied in critical reviews and certain other noncommercial uses permitted by copyright law.

First edition

Published by Inkora Press

उन सभी सरपंचों के नाम, जिन्होंने कुर्सी को अधिकार नहीं, ज़िम्मेदारी समझा।

विषय-सूची

1 शपथ के अगले दिन 9

2 संविधान की धारा 243 और आपकी कुर्सी 17

3 ग्राम सभा: असली मालिक 25

4 पंचायत का पैसा 33

5 काग़ज़, खाता और पोर्टल 41

6 योजना कैसे बनती है 49

7 काम ज़मीन पर 57

8 विभागों के बीच पुल 65

9 पानी, सफ़ाई और सेहत 73

10 कुर्सी किसकी है 81

11 हिसाब देने का साहस 89

12 पाँचवाँ साल 97

लेखक के बारे में 105

अध्याय 1

शपथ के अगले दिन

अलमारी से शुरुआत

2011 की बात है। भीलवाड़ा ज़िले की एक पंचायत में नई सरपंच कमला देवी ने शपथ के चौथे दिन पहली बैठक बुलाई और सचिव से कैश बुक माँगी। सचिव ने कुर्सी पर थोड़ा पीछे खिसकते हुए कहा, 'बाई सा, वो तो पिछले सरपंच जी के घर पर है। हिसाब मिला रहे थे।' कमला देवी ने पूछा कि कब आएगी। जवाब मिला, 'आ जाएगी, कहाँ जाएगी।'

रजिस्टर तीन हफ़्ते बाद लौटा। उसमें चौदह पन्ने ग़ायब थे, सिलाई के पास से सफ़ाई से काटे हुए।

मैं उस पंचायत में अगले साल एक प्रशिक्षण के सिलसिले में गया था और वह कैश बुक अपने हाथ में पलटी थी। मुझे आज तक पक्का नहीं पता कि उन चौदह पन्नों में क्या लिखा था। हो सकता है कुछ भी न हो, कोई ग़लत प्रविष्टि जिसे शर्म के मारे फाड़ दिया गया। पर ऑडिट शर्म नहीं समझता। अगले पाँच साल तक हर ऑडिट रिपोर्ट में उन पन्नों का जवाब कमला देवी से माँगा गया, जिन्होंने उन पर कभी दस्तख़त नहीं किए थे।

ज़्यादातर नए सरपंच सोचते हैं कि उनका काम सड़क से शुरू होता है। गाँव ने वोट सड़क के लिए दिया था, नाली के लिए, हैंडपंप के लिए। **आपका काम अलमारी से शुरू होता है।** पंचायत भवन की उस लोहे की अलमारी से, जिसकी चाबी अक्सर सचिव की जेब में रहती है।

बारह चीज़ें, एक-एक करके

चार्ज लेने के पहले सात दिनों में ये दस्तावेज़ अपने सामने गिनवाइए। सिर्फ़ देखिए मत, गिन-वाइए: कितने खंड, कितने पन्ने, आख़िरी प्रविष्टि किस तारीख़ की।

1. **कैश बुक**, सभी खंड, आख़िरी प्रविष्टि की तारीख़ और उस दिन का शेष।
2. **बैंक पासबुक और खाता-विवरण**, हर खाते का अलग। पंचायतों में अक्सर चार-पाँच खाते निकल आते हैं।

3. **चेक बुक**, बचे हुए चेकों के नंबर लिखकर। ख़ाली चेक पर पहले से दस्तख़त मिलें तो उसी दिन दर्ज करवाइए।
4. **स्टॉक रजिस्टर**: सीमेंट की बोरियाँ, पाइप, सोलर लाइट, सब कुछ।
5. **परिसंपत्ति रजिस्टर**, यानी पंचायत की ज़मीन, भवन, तालाब और दुकानों की सूची।
6. **अधूरे कामों की माप पुस्तिकाएँ** (MB), हर काम की अलग।
7. **लंबित उपयोगिता प्रमाणपत्रों की सूची**: किस योजना का पैसा आया, कितना ख़र्च दिखा, प्रमाणपत्र गया या नहीं।
8. **कार्यवाही रजिस्टर**, पंचायत बैठकों और ग्राम सभाओं दोनों के।
9. **माँग और वसूली रजिस्टर**: गृह कर, दुकानों का किराया, किसका कितना बाक़ी।
10. **रसीद बुकें**, इस्तेमाल हुई और कोरी दोनों, क्रमांक सहित।
11. **मनरेगा की फ़ाइलें**: जॉब कार्ड रजिस्टर और चालू कामों के मस्टर रोल।
12. **पिछली ऑडिट रिपोर्टें** और उन पर भेजे गए जवाबों की फ़ाइल।

इस सूची के नीचे चार दस्तख़त होने चाहिए: पंचायत सचिव (या ग्राम विकास अधिकारी), कम से कम दो वार्ड पंच, और आप। पिछले सरपंच मिल जाएँ तो उनके भी। न मिलें, या मना कर दें, तो यही बात उसी काग़ज़ पर लिखिए: 'पूर्व सरपंच को सूचना दी गई, उपस्थित नहीं हुए।' तारीख़ डालिए। एक प्रति अपने पास रखिए, एक BDO दफ़्तर में रिसीविंग लेकर जमा कीजिए।

कई राज्यों में चार्ज सौंपने का एक तय प्रपत्र होता है, और वह राज्य के पंचायती राज नियमों से तय होता है। अपने ब्लॉक से वह प्रपत्र माँगिए। पर प्रपत्र में जो छूटा हो, वह अपनी तरफ़ से जोड़िए। प्रपत्र आपको नहीं बचाएगा। गिनती बचाएगी।

सचिव बुरा मानेंगे। कहेंगे, 'सरपंच जी, भरोसा नहीं है क्या?' मानने दीजिए।

कमला देवी के पास वह काग़ज़ नहीं था। उनके पास बस इतना था कि वे जानती थीं कि उन्होंने वे पन्ने नहीं फाड़े। ऑडिट टीम ने उनकी बात ध्यान से सुनी, सिर हिलाया, और आपत्ति वहीं की वहीं रहने दी।

सचिव: साथी भी, परीक्षा भी

पंचायत सचिव आपका मातहत नहीं है। यह बात ज़्यादातर नए सरपंचों को चुभती है, ख़ासकर उन्हें जो गले में जीत की मालाएँ लिए पंचायत भवन पहुँचते हैं। सचिव (कई राज्यों में उसे ग्राम विकास अधिकारी या ग्राम सेवक कहते हैं) राज्य सरकार का कर्मचारी है। उसकी तनख़्वाह, तबादला और छुट्टी BDO या ज़िला परिषद के हाथ में है, आपके हाथ में नहीं। राजस्थान में मैंने ऐसे VDO देखे हैं जिनके पास एक साथ तीन पंचायतों का चार्ज था, और हफ़्ते में किसी एक पंचायत के हिस्से मुश्किल से डेढ़ दिन आता था।

फिर भी पंचायत का सबसे ज़्यादा काग़ज़ उसी की उँगलियों से गुज़रता है। eGramSwaraj का लॉगिन, PFMS पर भुगतान का क्रम, ऑडिट आपत्ति का जवाब किस भाषा में लिखा जाता है कि फ़ाइल बंद हो जाए, यह सब उसे पता है और आपको अभी नहीं पता। आप पाँच साल के लिए आए हैं। वह शायद आपसे पहले भी यहीं था। आपके बाद भी रहेगा।

पहले मैं प्रशिक्षणों में कहता था, 'सचिव पर नज़र रखिए।' अब नहीं कहता। अब कहता हूँ कि सचिव के साथ बैठिए और इतना सीख लीजिए कि नज़र रखने की ज़रूरत ही न पड़े। मेरी राय यह बदली कई ईमानदार सचिवों को देखकर, जो अपने सरपंच के शक के बोझ तले काम छोड़कर बस हाज़िरी लगाने लगे थे।

पहली मुलाक़ात पंचायत भवन में रखिए, अलमारी खुली हो, चाय हो। और ये बातें पूछिए:

1. उनके पास कुल कितनी पंचायतों का चार्ज है, और इस पंचायत में वे किस दिन मिलेंगे।
2. सबसे पुराना लंबित उपयोगिता प्रमाणपत्र कौन-सा है, और वह क्यों अटका है।
3. पिछली ऑडिट की सबसे बड़ी आपत्ति क्या थी, और उसका जवाब गया या नहीं।
4. पोर्टल पर कौन-कौन से काम उनके लॉगिन से होते हैं और कौन-से आपके DSC से होंगे।

बातचीत के आख़िर में एक बात शांति से, पर साफ़ कह दीजिए: आप कोई काग़ज़ बिना पढ़े दस्तख़त नहीं करेंगे। चाहे कितनी भी जल्दी हो।

यही बात परखी जाएगी, और जल्दी परखी जाएगी। 2017 में शिवपुरी ज़िले (मध्य प्रदेश) की एक पंचायत में नए सरपंच हरिओम के सामने शपथ के दूसरे हफ़्ते सचिव एक फ़ाइल लेकर आए। उसमें सत्रह बिल थे, कुल ₹2,86,400, सब पिछले कार्यकाल की सामग्री के। सचिव बोले, 'सरपंच जी, ये तो पुराने हैं, बस आपकी चिड़िया बाक़ी है। सप्लायर रोज़ फ़ोन कर रहा है।'

हरिओम ने फ़ाइल बंद नहीं की, पर पेन भी नहीं उठाया। बोले, 'हर बिल के साथ माप पुस्तिका का पन्ना और स्टॉक रजिस्टर की प्रविष्टि लगा दीजिए, फिर बैठते हैं।' दो दिन लगे। पंद्रह बिलों का मिलान हो गया। दो बिल, कुल ₹41,000 के PVC पाइप के, किसी रजिस्टर में दर्ज नहीं थे। न आमद में, न ख़र्च में। हरिओम ने उन दोनों पर लिखा, 'सामग्री की प्राप्ति का प्रमाण उपलब्ध नहीं, भुगतान रोका गया', और बाक़ी पंद्रह पर दस्तख़त कर दिए।

सचिव ने फ़ाइल समेटी, कुछ देर चुप रहे, फिर बोले, 'ठीक है सरपंच जी। अब पता चल गया आप कैसे काम करोगे।'

हरिओम ने मुझे यह क़िस्सा 2019 के एक प्रशिक्षण में सुनाया था। उन्होंने माना कि वे आज तक तय नहीं कर पाए कि वह वाक्य तारीफ़ थी या चेतावनी।

बैंक, DSC और पोर्टल

चुनाव का प्रमाणपत्र आपकी जेब में है, शपथ हो चुकी है, फिर भी बैंक की नज़र में पंचायत के खाते पर अब तक पुराने सरपंच के दस्तख़त ही मान्य हैं। शाखा प्रबंधक को अख़बार से पता नहीं चलता कि गाँव ने किसे चुना। उसे काग़ज़ चाहिए। और जब तक वह काग़ज़ उसकी फ़ाइल में नहीं लगता, पुराने नमूना-हस्ताक्षर वाला कोई भी चेक, किसी भी तारीख़ का, खाते से पैसा निकाल सकता है।

ज़्यादातर राज्यों में पंचायत का खाता संयुक्त हस्ताक्षर से चलता है: सरपंच और सचिव दोनों। हस्ताक्षर-अधिकार बदलवाने के लिए आम तौर पर ये काग़ज़ लगते हैं, पर अपनी शाखा से सूची लिखित में माँग लीजिए, क्योंकि हर बैंक का तरीक़ा थोड़ा अलग होता है:

1. पंचायत की पहली बैठक का प्रस्ताव, जिसमें खाते के संचालन के लिए नए नाम दर्ज हों।
2. निर्वाचन प्रमाणपत्र और शपथ की प्रति।
3. आपका KYC: आधार, पैन, फ़ोटो।
4. नए नमूना-हस्ताक्षर का कार्ड, और पुराने हस्ताक्षर रद्द करने का लिखित अनुरोध।

आख़िरी बिंदु सबसे ज़्यादा छूटता है। नया नाम जुड़ जाता है, पुराना हटता नहीं।

2021 में गया ज़िले (बिहार) की एक पंचायत के नए मुखिया राजेंद्र ने यही किया। नया नाम जुड़वाया, पुराना हटाने की अर्ज़ी नहीं दी। छह हफ़्ते बाद खाता-विवरण में ₹1,12,000 की एक निकासी दिखी, एक ऐसे चेक से जिस पर तारीख़ चुनाव से पहले की थी और दस्तख़त पूर्व मुखिया के। बैंक ने कहा कि चेक की वैधता तीन महीने की होती है और नमूना-हस्ताक्षर रिकॉर्ड में मौजूद था। शाखा प्रबंधक बोले, 'मुखिया जी, हमें किसी ने बताया ही नहीं कि वे हट गए।' यह जवाब तकनीकी रूप से सही था, और यही सबसे बुरा था। मामला बाद में ज़िला स्तर तक गया। मुझे पक्का नहीं पता कि वह पैसा लौटा या नहीं। आख़िरी बार मैंने उस फ़ाइल के बारे में 2023 में सुना था, तब तक जाँच चल रही थी।

इसलिए चार्ज-सूची में जो बचे हुए चेक गिने थे, उनके नंबर बैंक को लिखकर दीजिए, और पहले से दस्तख़त वाले हर चेक पर 'भुगतान रोकें' का निर्देश दर्ज करवाइए। इसकी रिसीविंग लीजिए।

अब डिजिटल हिस्सा। PFMS और eGramSwaraj से भुगतान बिना डिजिटल सिग्नेचर सर्टिफ़िकेट (DSC) के नहीं होता। DSC एक छोटा USB टोकन है, देखने में पेन ड्राइव जैसा, जो अधिकृत एजेंसी से आपके नाम पर बनता है। फिर ब्लॉक या ज़िला स्तर का पोर्टल प्रशासक उसे पोर्टल पर आपकी पंचायत से जोड़ता है। यह पूरा काम दो से चार हफ़्ते खा जाता है, और इस बीच भुगतान रुके रहते हैं, इसलिए इसे पहले हफ़्ते में शुरू कीजिए।

दो बातें याद रखिए। पहली: पुराने सरपंच का DSC पोर्टल से हटवाना उतना ही ज़रूरी है जितना अपना जुड़वाना। जब तक वह जुड़ा है, वह टोकन किसी के भी हाथ में हो, भुगतान को

मंज़ूरी दे सकता है। ब्लॉक से लिखित पुष्टि माँगिए कि पुराना DSC निष्क्रिय कर दिया गया। दूसरी: आपका टोकन आपकी जेब में रहेगा, सचिव की दराज़ में नहीं। उसका PIN सिर्फ़ आपको पता होगा।

मैं सैकड़ों पंचायत भवनों में गया हूँ। कम से कम आधे में मैंने सरपंच का DSC टोकन सचिव की मेज़ की दराज़ में पड़ा देखा है, एक रबर बैंड से बँधा, और उस पर पीली पर्ची चिपकी: '1234'।

वोट वाली गलियाँ, इस बार ख़ाली हाथ

चुनाव के दिनों में आप हर गली में गए थे, हाथ जोड़कर, समर्थकों के झुंड के साथ, और हर दरवाज़े पर कुछ न कुछ कहकर आए थे। अब उन्हीं गलियों में दोबारा जाना है। इस बार आपको बोलना कम है और सुनना ज़्यादा। पहले सौ दिनों के भीतर पंचायत के हर गाँव और हर टोले में कम से कम एक बार पैदल जाइए। गाड़ी या मोटरसाइकिल से नहीं, क्योंकि गाड़ी रुकती नहीं और लोग गाड़ी को रोकते नहीं।

साथ में भीड़ मत ले जाइए। एक वार्ड पंच काफ़ी है, वही जिसका वह वार्ड है, और एक लड़का या लड़की जो साफ़ लिख सके। और यह क्रम रखिए:

1. सबसे पहले उन टोलों में जाइए जहाँ से आपको सबसे कम वोट मिले थे। वहाँ के लोग मान बैठे हैं कि अगले पाँच साल उनकी कोई नहीं सुनेगा।
2. हर शिकायत एक अलग कॉपी में लिखवाइए: तारीख़, नाम, टोला, और समस्या ठीक उन्हीं शब्दों में जो बोले गए।
3. मौक़े पर कोई वादा मत कीजिए। सिर्फ़ इतना कहिए कि कब तक जवाब मिलेगा, और वह तारीख़ भी कॉपी में लिखिए।
4. टूटे हैंडपंप, बंद नाली, बिना बिजली के खंभे और कब्ज़ा हुई ज़मीन, सबकी फ़ोटो फ़ोन में रखिए, जगह के साथ।

यह कॉपी बाद में आपकी पहली ग्राम सभा का एजेंडा बनेगी, और उसके कई पन्ने ग्राम पंचायत विकास योजना की कच्ची सूची। मैंने ऐसी कई कॉपियाँ देखी हैं जो चार्ज-सूची से ज़्यादा काम की निकलीं।

2021 में टोंक ज़िले (राजस्थान) की एक पंचायत में नए सरपंच सुखराम मेरे प्रशिक्षण से लौटकर सबसे पहले पंचायत के आख़िरी छोर पर बसे एक टोले में गए। वहाँ पैंतीस-चालीस घर थे, और चुनाव में उन्हें वहाँ से गिनती के वोट मिले थे। एक बुज़ुर्ग महिला ने उन्हें देखते ही कहा, 'वोट माँगने आए थे तो जीप में आए थे। अब पैदल? क्या जीप भी हार गई?'

सुखराम हँसे नहीं। उन्होंने पूछा कि टोले की सबसे बड़ी तकलीफ़ क्या है। जवाब में लोग उन्हें एक हैंडपंप तक ले गए जो 2019 से बंद पड़ा था। औरतें पानी के लिए रोज़ लगभग एक किलो-

मीटर दूर दूसरे टोले जाती थीं। पंचायत के पुराने शिकायत रजिस्टर में इसकी तीन प्रविष्टियाँ थीं, तीनों पर लिखा था 'अवगत कराया गया'। किसे अवगत कराया गया, यह कहीं नहीं लिखा था।

मरम्मत का प्राक्कलन ₹3,800 का बना। पैसा पंद्रहवें वित्त आयोग के बँधे अनुदान से गया, क्योंकि पेयजल उसी मद में आता है। ग्यारहवें दिन हैंडपंप चल पड़ा। सुखराम ने मुझे बताया कि उस दिन वे दोबारा उस टोले में गए, फिर पैदल, और वही बुज़ुर्ग महिला बाल्टी भर रही थीं। उन्होंने सिर उठाकर बस इतना कहा, 'अगली बार नाली की बात करेंगे।'

मुझे नहीं पता कि उस टोले ने अगले चुनाव में सुखराम को वोट दिया या नहीं। वह चुनाव अभी हुआ नहीं है। पर इतना जानता हूँ कि उनकी शिकायत-कॉपी का दूसरा पन्ना उसी टोले की नाली से शुरू होता है, और उस पर अब तक कोई तारीख़ नहीं लिखी गई।

ऐसा दौरा एक दिन में नहीं निपटता। बड़ी पंचायत में, जहाँ सात-आठ गाँव और बीस-पच्चीस टोले हों, इसमें छह-सात हफ़्ते लगते हैं, अगर आप हफ़्ते में तीन शाम दें। शाम इसलिए, क्योंकि दिन में मज़दूर काम पर होते हैं और जो लोग दिन में घर मिलते हैं, वे अक्सर वही होते हैं जिनकी बात पहले से सुनी जाती रही है। एक बात और। हर टोले में कोई न कोई आपसे अलग से, एक तरफ़ ले जाकर, किसी पड़ोसी की शिकायत करेगा। सुनिए, पर उसे कॉपी में तभी लिखिए जब वह आदमी बाक़ी लोगों के सामने वही बात दोहराने को तैयार हो।

जो काम आपको विरासत में मिले

चार्ज-सूची में एक पन्ना ऐसा होगा जिसे पढ़कर आपका ख़ून खौलेगा। अधूरे कामों की सूची। आधी बनी पुलिया, बिना छत का सामुदायिक भवन, एक नाली जिसकी माप पुस्तिका में 240 मीटर दर्ज है और ज़मीन पर आप 150 मीटर से ज़्यादा नहीं गिन पाते। ऐसे हर काम के आगे चार बातें लिखिए: योजना का नाम, स्वीकृत राशि, अब तक हुआ भुगतान, और माप पुस्तिका में आख़िरी प्रविष्टि की तारीख़। फिर JEN को साथ लेकर हर काम का मौक़ा-निरीक्षण कराइए और उसकी रिपोर्ट पर उनके दस्तख़त लीजिए। आँख से देखा हुआ, लिखा हुआ, दस्तख़त किया हुआ।

लंबित उपयोगिता प्रमाणपत्र (UC) इससे भी ख़तरनाक हैं, क्योंकि वे चुप रहते हैं। पिछली किस्त का UC न गया हो तो अगली किस्त रुकती है, और रुकती आपके कार्यकाल में है। इस-लिए एक अलग सूची बनाइए:

1. किस योजना की किस्त, कितनी राशि, किस वर्ष की।
2. UC किसके कार्यकाल के ख़र्च का है।
3. ख़र्च के बिल-वाउचर फ़ाइल में हैं या नहीं।
4. जहाँ वाउचर नहीं हैं, वहाँ ब्लॉक को लिखित सूचना, और उसकी रिसीविंग।

एक नियम अपने लिए पत्थर पर लिख लीजिए: **जो ख़र्च आपने नहीं देखा, उसके UC पर आपके दस्तख़त नहीं होंगे।** सचिव कहेंगे कि ऊपर से दबाव है, किस्त अटकी है, बस एक

दस्तख़त। वह एक दस्तख़त पिछले पाँच साल की ज़िम्मेदारी को आपके नाम कर देता है।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *2022 में सीधी ज़िले (मध्य प्रदेश) की एक पंचायत में नए सरपंच ने पहली ही बैठक में पिछले सरपंच के समय शुरू हुए सामुदायिक भवन का बचा भुगतान रोक दिया। भवन ₹6,40,000 का स्वीकृत था, दीवारें खड़ी थीं, छत बाक़ी थी। सरपंच का कहना था, 'उसका ठेकेदार है, उसी का आदमी। एक पैसा नहीं जाएगा।' कोई लिखित आपत्ति नहीं, कोई जाँच की माँग नहीं, बस रोक। उस बरसात में खुली दीवारों में पानी भरा और पूर्वी दीवार का एक हिस्सा बैठ गया। अगले ऑडिट में आपत्ति लगी 'स्वीकृत कार्य को बिना कारण अपूर्ण छोड़ने से परिसंपत्ति की क्षति'। जवाब नए सरपंच से माँगा गया।*

मैं समझता हूँ कि बदला लेने का मन क्यों होता है। चुनाव में गालियाँ चली होंगी, शायद मुक़दमे भी। पर पिछले सरपंच ने अगर सचमुच गड़बड़ी की है, तो उसका रास्ता भुगतान रोकना या उसके समर्थकों का हैंडपंप टालना नहीं है। रास्ता है: मौक़ा-निरीक्षण की रिपोर्ट, माप पुस्तिका और भुगतान का अंतर, और ये तीनों काग़ज़ लगाकर BDO को लिखित शिकायत। जाँच करना उनका काम है, आपका नहीं। आपका काम है कि काग़ज़ इतना साफ़ हो कि जाँच टल न सके।

और जो काम ठीक-ठाक चल रहे हैं, उन्हें चलने दीजिए, चाहे पत्थर पर किसी और का नाम खुदे। सड़क पर चलने वाला यह नहीं पूछता कि उसकी नींव किसके कार्यकाल में पड़ी।

ईमानदारी से कहूँ, शुरू के वर्षों में मैं ख़ुद नए सरपंचों को सलाह देता था कि पुराने कामों से दूर रहें, उन्हें छुएँ ही नहीं। अब नहीं देता। दूर रहने से अधूरा काम पूरा नहीं होता, बस उसकी धूल आपके हिस्से आती है।

सीधी वाले उन सरपंच से मेरी मुलाक़ात ऑडिट के बाद हुई थी। वे बैठे-बैठे ऑडिट रिपोर्ट का वह पन्ना मोड़ते रहे, खोलते रहे। फिर बोले, 'साहब, जीता तो मैं हूँ। फिर फ़ैसला कौन करेगा, मैं या BDO?'

उस सवाल का जवाब उस दिन मेरे पास एक वाक्य में नहीं था। आज भी नहीं है। जवाब 1992 के एक संविधान संशोधन से शुरू होता है और आपके राज्य के पंचायती राज अधिनियम की किसी धारा पर जाकर रुकता है, जिसे शायद आपके सचिव ने भी पूरा नहीं पढ़ा।

अध्याय 2

संविधान की धारा 243 और आपकी कुर्सी

एक शब्द जो 1992 में नहीं बदला

'कर सकेगा।'

संविधान के अनुच्छेद 243G में यही दो शब्द हैं, और मेरी राय में आपकी कुर्सी की पूरी कहानी इन्हीं में छिपी है। वाक्य कहता है कि राज्य का विधान-मंडल, क़ानून बनाकर, पंचायतों को ऐसी शक्तियाँ और अधिकार दे **सकेगा** जिनसे वे स्वशासन की संस्था के रूप में काम कर सकें। 'देगा' नहीं लिखा। 'सकेगा' लिखा है। संविधान बनाने वालों ने दरवाज़ा खोला, पर उसमें से अंदर किसे और कितना आने देना है, यह फ़ैसला राज्यों पर छोड़ दिया।

यह बात समझने के लिए पहले यह देखना ज़रूरी है कि 1992 से पहले हालत क्या थी। पंचायतें तब भी थीं। 1959 में नागौर से पंचायती राज की औपचारिक शुरुआत हो चुकी थी। पर वे राज्य सरकार की मर्ज़ी पर चलती थीं। चुनाव कब होंगे, होंगे भी या नहीं, यह ऊपर तय होता था। बिहार में 1978 के बाद अगले पंचायत चुनाव 2001 में हुए। तेईस साल।

2008 में वैशाली ज़िले के एक प्रशिक्षण में एक बुज़ुर्ग मुखिया जी पीछे की दरी पर बैठे थे। चाय के समय उन्होंने बताया कि वे 1978 में चुने गए थे और काग़ज़ पर लगभग दो दशक तक 'पद पर' बने रहे, क्योंकि नया चुनाव हुआ ही नहीं। फिर हँसकर बोले, 'बाबू, हम मुखिया थे कि नहीं, ई हमको भी पता नहीं चला। बीडीओ साहब जब बुलाते, तब थे।'

73वाँ संविधान संशोधन इसी हालत को ठीक करने आया। संसद ने इसे दिसंबर 1992 में पारित किया और यह **24 अप्रैल 1993** से लागू हुआ। इसी दिन को आज राष्ट्रीय पंचायती राज दिवस के रूप में मनाया जाता है। संविधान में भाग 9 जुड़ा, अनुच्छेद 243 से 243O तक। इसने कुछ चीज़ें पक्की कर दीं, जिन्हें अब कोई राज्य सरकार अपनी मर्ज़ी से नहीं हटा सकती:

- हर पाँच साल में चुनाव अनिवार्य। पंचायत भंग हो तो छह महीने के भीतर चुनाव।
- हर राज्य में एक **राज्य निर्वाचन आयोग**, जो चुनाव कराएगा, सरकार नहीं।

- अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए आबादी के अनुपात में आरक्षण, और महिलाओं के लिए कम से कम एक-तिहाई सीटें।
- हर पाँच साल में **राज्य वित्त आयोग**, जो बताएगा कि राज्य के पैसे में पंचायतों का हिस्सा कितना हो।
- ग्राम सभा का संवैधानिक अस्तित्व।
- गाँव, ब्लॉक और ज़िला, यानी **त्रि-स्तरीय व्यवस्था** (जिन छोटे राज्यों की आबादी 20 लाख से कम है, वहाँ बीच का स्तर छोड़ा जा सकता है)।

यानी संशोधन ने यह तय कर दिया कि **पंचायत रहेगी, चुनी जाएगी और समय पर चुनी जाएगी**। यह छोटी बात नहीं है। वैशाली वाले मुखिया जी से पूछिए।

पर जो नहीं बदला, वह भी उतना ही साफ़ है। संविधान ने यह नहीं बताया कि पंचायत क्या-क्या करेगी। उसने ग्यारहवीं अनुसूची में 29 विषयों की एक सूची दी (खेती, पेयजल, सड़कें, प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य वग़ैरह), और फिर वही दो शब्द लगा दिए: राज्य ये विषय सौंप **सकेगा**। किसी राज्य ने 29 में से 29 विषय काग़ज़ पर दे दिए, पर उनके कर्मचारी और पैसा अपने विभागों में रखे। किसी ने आधे दिए। किसी ने सिर्फ़ नाम दिए।

मैंने बरसों यह माना कि यह संविधान बनाने वालों की कमज़ोरी थी। अब पक्का नहीं कह सकता। भारत जैसे देश में केरल और झारखंड के लिए एक ही नियम शायद चलता भी नहीं। फिर भी, सीधी वाले सरपंच के सवाल का आधा जवाब यहीं है। आप चुने गए, यह संविधान की गारंटी है। आप क्या फ़ैसला कर सकते हैं, यह संविधान ने किसी और काग़ज़ पर लिखने के लिए छोड़ दिया।

वह काग़ज़ आपके राज्य का पंचायती राज अधिनियम है। राजस्थान में उसका साल 1994 है, मध्य प्रदेश में 1993, बिहार में 2006। और ज़्यादातर पंचायत भवनों की अलमारी में उसकी जो प्रति रखी होती है, उसके पन्ने अब तक आपस में चिपके हुए हैं।

29 विषय काग़ज़ पर, कितने आपके हाथ में: केरल और उत्तर प्रदेश की तुलना

2014 के फ़रवरी में मैं राजस्थान के चौदह सरपंचों के साथ एक अध्ययन-यात्रा पर त्रिशूर ज़िले की एक ग्राम पंचायत गया था। पंचायत भवन में बैठक चल रही थी, और मेज़ के एक सिरे पर सफ़ेद कोट पहने एक युवा डॉक्टर बैठी थीं, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र की प्रभारी। वे पंचायत की स्वास्थ्य स्थायी समिति को पिछले महीने की दवाओं का हिसाब दे रही थीं। पाली ज़िले से आए एक सरपंच ने मेरे कान में पूछा, 'चौधरी जी, ये डॉक्टरनी जी पंचायत को जवाब दे री है? हमारे यहाँ तो डॉक्टर साहब हमें पहचानते तक नी।'

हाँ, वे जवाब दे रही थीं। केरल में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, सरकारी प्राथमिक स्कूल, आँगनवाड़ी और कृषि भवन की निगरानी स्थानीय निकायों को सौंपी गई है, और यह सिर्फ़ आदेश में नहीं लिखा, इनके भवन, कुछ कर्मचारी और रख-रखाव का पैसा भी साथ गया। पं-

चायत विशेषज्ञ इसे **तीन F** कहते हैं: Functions (काम), Funds (पैसा) और Functionaries (कर्मचारी)। विषय सौंपने का मतलब तभी बनता है जब तीनों साथ जाएँ।

केरल ने यह रास्ता कैसे पकड़ा, इसकी जड़ 1996 के जनकीय आसूत्रण अभियान (जन-योजना अभियान) में है, जब राज्य ने अपनी योजना-राशि का लगभग 35 से 40 प्रतिशत हिस्सा सीधे स्थानीय निकायों को देने का फ़ैसला किया। पंचायतें अचानक लाखों रुपये की योजनाएँ बनाने लगीं। बहुत ग़लतियाँ भी हुईं, शुरुआती बरसों के ऑडिट इसके गवाह हैं। पर ढाँचा टिक गया।

अब इसकी तुलना उत्तर प्रदेश से कीजिए। वहाँ का पंचायत राज अधिनियम 1947 का है, यानी संविधान से भी पुराना, जिसे 1994 में 73वें संशोधन के अनुसार संशोधित किया गया। काग़ज़ पर राज्य ने कई विभागों के काम ग्राम पंचायतों को सौंपने के शासनादेश जारी किए हैं। पर ज़मीन पर क्या है, यह बाराबंकी ज़िले के एक प्रधान से सुनिए, जिनसे मैं 2019 में लखनऊ की एक कार्यशाला में मिला था। उनके गाँव के प्राथमिक विद्यालय की छत से बरसात में पानी टपकता था। उन्होंने पंचायत के खाते से ₹38,000 की मरम्मत का प्रस्ताव रखा। सचिव ने मना किया, खंड शिक्षा अधिकारी ने कहा कि भवन विभाग की संपत्ति है और मरम्मत विभाग की कार्ययोजना से होगी।

'स्कूल हमरे गाँव का, बच्चा हमरे गाँव के, छत हमरी नाहीं,' वे बोले। 'हम तो बस फ़ोटो खिंचवाय के दे सकत हैं।'

मैं यह दावा नहीं करूँगा कि उत्तर प्रदेश में कुछ भी नहीं बदला। विद्यालय प्रबंधन समिति में प्रधान की भूमिका है, कायाकल्प जैसे अभियानों में पंचायतों के पैसे से स्कूलों में शौचालय और फ़र्श बने हैं, और नियम हर कुछ साल में बदलते रहते हैं। मेरे पास वहाँ के हर ज़िले की ताज़ा जानकारी नहीं है। पर ढाँचे का अंतर साफ़ है: केरल में डॉक्टर पंचायत की बैठक में आती हैं, उत्तर प्रदेश में प्रधान विभाग के दफ़्तर के बाहर इंतज़ार करते हैं।

पंचायती राज मंत्रालय समय-समय पर राज्यों का **विकेंद्रीकरण सूचकांक** (Devolution Index) जारी करता है, जिसमें देखा जाता है कि किस राज्य ने कितना काम, पैसा और कर्मचारी सचमुच पंचायतों को दिया। केरल, कर्नाटक और महाराष्ट्र प्रायः ऊपर के राज्यों में रहते हैं। हिंदी-भाषी राज्य ज़्यादातर बीच में या नीचे।

आपके लिए इसका व्यावहारिक मतलब यह है कि 29 विषयों की सूची पढ़कर उत्साहित होने से पहले हर विषय के आगे तीन सवाल लिखिए:

1. क्या राज्य के अधिनियम या शासनादेश में यह काम ग्राम पंचायत को सौंपा गया है?
2. क्या उसके लिए कोई पैसा पंचायत के खाते में आता है, और किस मद से?
3. क्या उस विभाग का कोई कर्मचारी पंचायत को रिपोर्ट करता है, या कम से कम ग्राम सभा में आने को बाध्य है?

तीनों के जवाब 'हाँ' हों, तो वह विषय आपका है। एक 'हाँ' हो, तो वह विषय आपका नाम भर है।

पाली वाले सरपंच ने लौटती ट्रेन में अपनी डायरी में 29 विषयों की सूची लिखी और हर एक के आगे ये तीन ख़ाने बनाए। एर्नाकुलम से अहमदाबाद तक वे भरते रहे। ज़्यादातर ख़ाने ख़ाली रहे।

कौन क्या करता है: एक पन्ने का बँटवारा

अधिनियम खोलेंगे तो सरपंच, उपसरपंच, वार्ड पंच और सचिव के काम अलग-अलग धाराओं और नियमों में बिखरे मिलेंगे, कुछ अधिनियम में, कुछ राज्य के पंचायत नियमों में (राजस्थान में 1996 के नियम), और कुछ ऐसे शासनादेशों में जिनकी प्रति ब्लॉक के बाबू के अलावा किसी के पास नहीं होती। प्रशिक्षणों में मैं इन्हें एक पन्ने पर समेट देता हूँ। नीचे वही पन्ना है, हिंदी-भाषी राज्यों के आम ढाँचे पर आधारित:

पद	मुख्य ज़िम्मेदारी	जो उसका काम नहीं है
सरपंच / मुखिया / प्रधान	पंचायत और ग्राम सभा की बैठक बुलाना और अध्यक्षता करना; प्रस्तावों को लागू करवाना; भुगतान पर संयुक्त हस्ताक्षर; पंचायत का प्रतिनिधित्व	अकेले फ़ैसला लेकर पंचायत के नाम पर ख़र्च करना; सचिव से निजी काम करवाना
उपसरपंच	सरपंच की अनुपस्थिति, निलंबन या पद ख़ाली होने पर उसका काम; सौंपी गई समितियों का संचालन	सरपंच के रहते समानांतर आदेश देना
वार्ड पंच	अपने वार्ड की ज़रूरतें पंचायत की बैठक में रखना; प्रस्ताव पर मत देना; स्थायी समितियों में काम; वार्ड सभा	सीधे ठेकेदार या मज़दूर को निर्देश देना
सचिव / ग्राम विकास अधिकारी	सारे रजिस्टर, कैश बुक और कार्यवाही-विवरण रखना; पोर्टल पर प्रविष्टि; भुगतान पर संयुक्त हस्ताक्षर; नियम-विरुद्ध प्रस्ताव पर लिखित आपत्ति	पंचायत के फ़ैसले बदलना या उन्हें बिना कारण रोके रखना

यह तालिका पढ़ने में सीधी लगती है। गड़बड़ हमेशा तीसरे ख़ाने में होती है।

उपसरपंच वाली चूक

2018 में चित्तौड़गढ़ ज़िले की एक पंचायत की सरपंच अपनी बीमार माँ के पास अहमदाबाद में बाईस दिन रहीं। इस बीच एक हैंडपंप-मरम्मत वाले का ₹62,000 का बिल आया। उपसरपंच ने सोचा कि सरपंच बाहर हैं तो काम उनका है, और उन्होंने सचिव के साथ चेक पर दस्तख़त कर दिए। बैंक ने चेक पास भी कर दिया, क्योंकि बैंक को किसी ने बताया ही नहीं था कि अधिकार किसके पास है।

छह महीने बाद ऑडिट में सवाल उठा: उपसरपंच को कार्यभार किस आदेश से मिला? कोई आदेश नहीं था। न सरपंच का लिखित अवकाश-पत्र, न पंचायत का प्रस्ताव, न विकास अधिकारी को सूचना। काम असली था, हैंडपंप चल रहा था, फिर भी ₹62,000 अनियमित भुगतान

में दर्ज हुआ। उपसरपंच मुझसे बोले, 'साहब, पंप तो सबके सामने ठीक हुआ। चोरी कहाँ की?' चोरी कहीं नहीं थी। काग़ज़ कहीं नहीं था।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *उपसरपंच कब और कैसे सरपंच के अधिकार इस्तेमाल करेगा, यह हर राज्य के अधिनियम और नियमों में अलग लिखा है। कहीं सरपंच की तय दिनों से ज़्यादा अनुपस्थिति पर अपने आप, कहीं केवल लिखित सौंपने या सक्षम अधिकारी के आदेश से। बिहार में तो मुखिया और उपमुखिया के बीच भुगतान-अधिकार का बँट-वारा अलग ढंग से तय है। अपने राज्य का नियम पढ़े बिना उपसरपंच को चेक-बुक मत थमाइए।*

सचिव की आपत्ति आपकी दुश्मन नहीं

तालिका की आख़िरी पंक्ति पर सबसे ज़्यादा झगड़े होते हैं। सरपंच मानते हैं कि सचिव का काम उनकी बात मानना है। सचिव मानते हैं कि सरपंच पाँच साल के मेहमान हैं। दोनों आधे सही हैं।

सचिव अगर किसी प्रस्ताव को नियम-विरुद्ध मानता है, तो उसे **लिखित आपत्ति** देनी चा-हिए, और वह आपत्ति कार्यवाही-विवरण में दर्ज होनी चाहिए। इससे दो बातें होती हैं:

- अगर आपत्ति सही है, तो आप ग़लत ख़र्च से बच जाते हैं।
- अगर आपत्ति ग़लत है, तो पंचायत उसे दर्ज करके आगे बढ़ सकती है, और बाद में ज़िम्मेदारी साफ़ बँटी रहती है।

सीधी वाले सरपंच की मुश्किल यही थी कि उनके पास न सचिव की आपत्ति थी, न अपनी। मैं पहले सोचता था कि लिखित आपत्ति की यह ज़िद सचिवों की अपनी खाल बचाने की आदत है। बीस साल बाद लगता है, उसमें आपकी खाल भी शामिल है।

वार्ड पंचों के बारे में एक बात और। ज़्यादातर पंचायतों में वे साल में चार बैठकों में आते हैं, हाथ उठाते हैं और चाय पीकर चले जाते हैं। देवास ज़िले की एक बैठक में, 2022 में, एक युवा वार्ड पंच ने सचिव से कैश बुक दिखाने को कहा। पूरा कमरा चुप हो गया। सचिव ने सरपंच की ओर देखा, सरपंच ने छत की ओर।

उस दिन कैश बुक नहीं खुली। बैठक 'अगले विषय' पर चली गई और युवक चुपचाप बैठा रहा। हफ़्ते भर बाद ब्लॉक के एक प्रशिक्षण में उसे पता चला कि वह 2022 की पहली बैठक के प्रस्ताव से पंचायत की निर्माण समिति का सदस्य दर्ज है। समिति के रजिस्टर में उसका नाम था, उसके दस्तख़त की जगह ख़ाली थी, और समिति की एक भी बैठक कभी नहीं हुई थी। जिस कैश बुक को देखने पर कमरा चुप हुआ था, उसके निर्माण वाले पन्ने देखना उसका काम था।

स्थायी समितियाँ: वे काग़ज़ पर हैं, उन्हें काम पर लगाइए

लगभग हर राज्य का अधिनियम ग्राम पंचायत में कुछ **स्थायी समितियाँ** बनाने को कहता है। नाम और संख्या राज्य-दर-राज्य बदलते हैं, पर विषय मोटे तौर पर वही रहते हैं: योजना और विकास, निर्माण कार्य, शिक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण, पानी, प्रशासन। कार्यकाल की पहली या दूसरी बैठक में सचिव एक छपा हुआ प्रस्ताव पढ़ता है, हर समिति के आगे तीन-चार वार्ड पंचों के नाम लिखे जाते हैं, सब हाथ उठाते हैं। फिर पाँच साल तक वह पन्ना कोई नहीं पलटता।

यह बर्बादी है, और आपके लिए ख़तरा भी। समितियाँ न चलें, तो हर फ़ैसला सरपंच की मेज़ पर आता है। हर ग़लती का जवाब भी वहीं से माँगा जाता है।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1947 ग्राम पंचायत के लिए छह समितियाँ तय करता है, जिनमें नियोजन एवं विकास, शिक्षा, निर्माण कार्य और जल प्रबंधन समिति शामिल हैं। मध्य प्रदेश, राजस्थान और बिहार के अधिनियमों में समितियों के नाम, सदस्य-संख्या और अध्यक्ष चुनने का तरीक़ा अलग है। कहीं महिला या अनुसूचित जाति के सदस्य का होना अनिवार्य है, कहीं नहीं। समिति के अधिकार केवल सलाह तक हैं या वह फ़ैसला भी ले सकती है, यह भी आपके राज्य का अधिनियम ही बताएगा। प्रति ब्लॉक से माँगिए, मुँह-ज़बानी पर मत चलिए।*

रायसेन ज़िले की एक पंचायत में 2020 की गर्मियों में चौदह हैंडपंप बंद थे और हर सुबह सरपंच के दरवाज़े पर औरतों की भीड़ लगती थी। सरपंच ने जल समिति के तीन सदस्यों को बुलाया, जिनमें दो को याद भी नहीं था कि वे सदस्य हैं। उन्हें एक काम दिया: हर पंप पर जाकर देखो, क्या ख़राब है, कितने का काम है, लिखकर लाओ। चार दिन में सूची आ गई। आठ पंपों में केवल चेन और वॉशर बदलने थे, दो में पाइप गल गए थे, और चार ऐसे थे जिनका पानी 2017 से खारा था और जिन पर पैसा लगाना बेकार था। समिति के प्रस्ताव पर दस पंपों की मरम्मत ₹38,500 में हुई। ऑडिट में जब पूछा गया कि बाक़ी चार क्यों छोड़े, तो जवाब समिति की बैठक के कार्यवाही-विवरण में लिखा मिला, तारीख़ और चार दस्तख़त के साथ।

समिति को ज़िंदा करने के लिए बहुत कुछ नहीं चाहिए:

1. हर समिति का एक अलग पतला रजिस्टर, जिसमें बैठक की तारीख़, उपस्थित सदस्य और लिए गए निर्णय हों।
2. हर तीन महीने में कम से कम एक बैठक, भले बीस मिनट की।
3. हर समिति को साल में एक ठोस काम: शिक्षा समिति मध्याह्न भोजन का रजिस्टर देखे, निर्माण समिति अधूरे कामों की माप पुस्तिका।
4. पंचायत की मासिक बैठक में समिति के अध्यक्ष की दो मिनट की रिपोर्ट।

मुझे सच में नहीं पता कि हिंदी-भाषी राज्यों में कितनी पंचायतों में समितियाँ नियमित बैठती हैं। किसी के पास भरोसेमंद आँकड़ा है, ऐसा भी नहीं लगता। मेरे अपने प्रशिक्षणों में जब मैं पूछता हूँ कि पिछले साल किसकी किसी समिति की एक भी बैठक हुई, तो साठ-सत्तर लोगों के कमरे में चार-पाँच हाथ उठते हैं। उनमें से एक हाथ अक्सर कुछ देर बाद नीचे चला जाता है।

देवास वाला युवक अब निर्माण समिति का अध्यक्ष है। पिछले महीने उसका फ़ोन आया था। उसने समिति के रजिस्टर की पहली प्रविष्टि की फ़ोटो भेजी, पेन से लिखी हुई, तारीख़ के नीचे दो लाइनें खिंची हुई: 'सचिव जी से माप पुस्तिका क्रमांक 3 माँगी गई। अगली बैठक तक देने को कहा।'

PESA क्षेत्र: जहाँ ग्राम सभा की सहमति के बिना ज़मीन भी नहीं जा सकती

अगर आपकी पंचायत संविधान की पाँचवीं अनुसूची वाले क्षेत्र में है, तो ऊपर लिखी लगभग हर बात का वज़न बदल जाता है। ये वे आदिवासी-बहुल इलाक़े हैं जिन्हें राष्ट्रपति ने अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया है: राजस्थान में बाँसवाड़ा, डूंगरपुर और उदयपुर-प्रतापगढ़ के हिस्से, मध्य प्रदेश में झाबुआ, मंडला, डिंडोरी जैसे ज़िले, छत्तीसगढ़ और झारखंड का बड़ा भाग। यहाँ 1996 का एक छोटा-सा क़ानून लागू होता है, **पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम**, जिसे सब PESA कहते हैं।

PESA की सबसे बड़ी बात यह है कि वह ताक़त पंचायत को नहीं, **ग्राम सभा** को देता है। और ग्राम सभा की परिभाषा भी बदल देता है। यहाँ गाँव का मतलब राजस्व गाँव नहीं, वह बसावट या फला है जहाँ लोग अपनी परंपरा से एक समुदाय की तरह रहते हैं। यानी एक पंचायत में तीन-चार अलग ग्राम सभाएँ हो सकती हैं, और हर एक की अपनी आवाज़।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *PESA की धारा 4 ग्राम सभा को कई अधिकार देती है: विकास योजनाओं और लाभार्थियों की स्वीकृति, गौण वनोपज (तेंदूपत्ता, महुआ जैसी चीज़ें) पर स्वामित्व, छोटे जल-स्रोतों का प्रबंधन, गौण खनिजों की लीज़ पर सिफ़ारिश, आदिवासी ज़मीन को ग़ैर-आदिवासी के हाथ जाने से रोकना और नशीले पदार्थों की बिक्री पर नियंत्रण। ज़मीन अधिग्रहण पर PESA 'परामर्श' की बात करता है, पर 2013 का भूमि अधिग्रहण क़ानून (धारा 41) अनुसूचित क्षेत्र में ग्राम सभा की **पूर्व सहमति** माँगता है। हर राज्य ने PESA के अपने नियम अलग समय पर और अलग शब्दों में बनाए हैं। राजस्थान के नियम 2011 में आए, मध्य प्रदेश के 2022 में। अपने राज्य के नियम की प्रति ब्लॉक से लीजिए।*

मैं ईमानदारी से कहूँ तो PESA के बारे में मेरी राय बीस साल में दो बार बदली है। शुरू में मुझे यह काग़ज़ी क़ानून लगता था, क्योंकि राज्य नियम बनाने में बरसों लगाते रहे और ज़मीन पर कुछ नहीं बदला। फिर बाँसवाड़ा की एक सभा देखी।

2019 की सर्दियाँ थीं। पंचायत के एक फले के पास की पहाड़ी पर पत्थर की खदान के लिए लीज़ का प्रस्ताव आया था। एक ठेकेदार ने सरपंच को भरोसा दिलाया था कि बदले में स्कूल के पास ₹2 लाख का एक कमरा बनवा देगा। पटवारी काग़ज़ लेकर आया, सचिव ने प्रस्ताव का मसौदा तैयार कर रखा था। मैं उस दिन पीछे दरी पर बैठा था, किसी और काम से आया था।

फले के एक बुज़ुर्ग खड़े हुए। उन्होंने सरपंच की ओर नहीं, सचिव की ओर देखा।

'यो पहाड़ म्हारे फले को है। म्हारी सभा कद हुई?'

सचिव ने कहा कि पंचायत की बैठक में प्रस्ताव पास हो जाएगा। बुज़ुर्ग बोले, 'पंचायत में म्हारो एक पंच है। फले में एक सौ बारह वोट हैं।'

प्रस्ताव उस दिन पास नहीं हुआ। तीन हफ़्ते बाद फले की अलग ग्राम सभा हुई, और लीज़ के ख़िलाफ़ लिखित प्रस्ताव गया, एक सौ बारह में से इक्यानवे दस्तख़त और अँगूठों के साथ। कमरा नहीं बना। पहाड़ अब भी है।

PESA क्षेत्र के सरपंच के लिए इसका सीधा मतलब है:

- जो फ़ैसला ग्राम सभा का है, उसे पंचायत की बैठक में निपटाने की कोशिश मत कीजिए। बाद में वह फ़ैसला रद्द भी हो सकता है और आपके नाम पर शिकायत भी बन सकती है।
- हर फले की सभा का अलग कार्यवाही-विवरण रखिए, उपस्थिति के साथ।
- ठेकेदार या विभाग का कोई भी 'सहमति-पत्र' जिस पर ग्राम सभा की तारीख़ नहीं, उस पर दस्तख़त मत कीजिए।

सीधी वाले सरपंच का सवाल था कि फ़ैसला वे करेंगे या BDO। बाँसवाड़ा की उस दोपहर जवाब तीसरा निकला। फ़ैसला उन लोगों ने किया जो दरी पर बैठे थे।

पर मैं एक बात आज तक तय नहीं कर पाया। उस दिन एक सौ बारह में से इक्यानवे लोग आए थे। उनमें से कितने इसलिए आए कि उन्हें सभा की सूचना ठीक से मिली थी, और कितने इसलिए कि उन्हें डर था कि पहाड़ चला जाएगा? और जिस साल कोई पहाड़ ख़तरे में न हो, उस साल उसी फले की सभा में कितने लोग आते हैं?

रजिस्टर में अगली सभा की उपस्थिति सत्रह थी।

अध्याय 3

ग्राम सभा: असली मालिक

ढोल, दीवार और फ़ोन

मुनादी वाले का नाम भैरूलाल था, और 2019 में अजमेर ज़िले की एक पंचायत में उसे एक फेरे के ₹300 मिलते थे। उस साल 2 अक्टूबर की ग्राम सभा से चार दिन पहले सचिव ने उसे बुलाया ही नहीं। सूचना पंचायत भवन के नोटिस बोर्ड पर चिपका दी गई, और नोटिस बोर्ड भवन के बरामदे के अंदर था, जिसके लोहे के दरवाज़े पर ताला लगा रहता था। पंचायत में 2,340 पंजीकृत मतदाता थे। सभा में बीस लोग आए। मैं उनमें इक्कीसवाँ था, पीछे की दरी पर, और मैंने गिना था।

सचिव को कोई घबराहट नहीं थी। उपस्थिति रजिस्टर आगे बढ़ाते हुए बोले, 'साहब, कोरम की चिंता मत करो, दस्तख़त शाम तक पूरे हो जाएँगे।' यही वह वाक्य है जिससे आधी पंचायतों की ग्राम सभाएँ काग़ज़ पर ज़िंदा रहती हैं और ज़मीन पर मर चुकी होती हैं। शाम तक जो दस्तख़त 'पूरे' होते हैं, वे सभा में बैठे लोगों के नहीं होते। और जिस दिन कोई नाराज़ ग्रामीण सूचना के अधिकार में उस दिन की उपस्थिति माँगता है और उसमें अपने मरे हुए दादा का अँगूठा पाता है, उस दिन जवाब सचिव से नहीं, सभा के अध्यक्ष से माँगा जाता है।

सभा की वैधता उस दिन तय नहीं होती जिस दिन सभा होती है। वह उस दिन तय होती है जिस दिन सूचना दी जाती है।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *ग्राम सभा की सूचना कितने दिन पहले दी जाए और कोरम कितना हो, यह आपके राज्य का पंचायती राज अधिनियम और उसके नियम तय करते हैं। कई राज्यों में कोरम कुल मतदाताओं का दसवाँ हिस्सा रखा गया है, कुछ में कम, और कई राज्यों में महिलाओं या अनुसूचित जाति-जनजाति की न्यूनतम उपस्थिति की अलग शर्त भी है। सूचना की अवधि भी राज्य-दर-राज्य बदलती है। किसी प्रशिक्षक, पड़ोसी सरपंच या इस किताब के भरोसे मत रहिए। अपने राज्य के नियम की वह धारा निकालकर उसकी फ़ोटोकॉपी अपनी फ़ाइल में रखिए।*

अजमेर वाली पंचायत में दसवें हिस्से का मतलब था कम से कम 234 लोग। बीस लोग उसका क़रीब बारहवाँ हिस्सा थे।

तीन रास्ते, तीन अलग गाँव

अगले साल नई सरपंच आईं, और उन्होंने भैरूलाल को वापस बुलाया। पर उन्होंने एक काम और किया जो मैंने बहुत कम सरपंचों को करते देखा है: उन्होंने पूछा कि कौन किस रास्ते से ख़बर पाता है। जवाब से साफ़ हुआ कि एक ही पंचायत में असल में तीन अलग गाँव बसे हैं।

- **मुनादी** उन तक पहुँचती है जो दिन में घर पर रहते हैं: बुज़ुर्ग, ज़्यादातर औरतें, और वे बस्तियाँ जहाँ फ़ोन तो है पर पंचायत के ग्रुप में नाम नहीं। ढोल को हर टोले में रुकना है, सिर्फ़ मुख्य चौक पर नहीं। भैरूलाल से कहिए कि सभा की तारीख़ के साथ एजेंडा का एक काम भी बोले ('हैंडपंप की मरम्मत पर फ़ैसला होगा')। ख़ाली तारीख़ से लोग नहीं आते।
- **नोटिस बोर्ड** काग़ज़ी सबूत है। उसे ताले के बाहर लगाइए, और उसी दिन सूचना की फ़ोटो लेकर तारीख़ के साथ फ़ाइल में रखिए। यही फ़ोटो बाद में सिद्ध करती है कि सूचना समय पर दी गई थी। एक प्रति स्कूल, आँगनवाड़ी और राशन की दुकान पर भी।
- **वॉट्सऐप** उन जवानों तक पहुँचता है जो सुबह मज़दूरी पर शहर निकल जाते हैं और मुनादी कभी नहीं सुनते। पर वह अकेला कभी मत रखिए।

उस पंचायत के वॉट्सऐप ग्रुप में 180 सदस्य थे। जब सरपंच ने सूची देखी तो उनमें सात औरतें थीं, और नाले के पार वाली बस्ती से, जहाँ लगभग 400 मतदाता रहते थे, सिर्फ़ दो नाम। जो सरपंच सोचते हैं कि 'ग्रुप में डाल दिया' मतलब 'सबको बता दिया', वे अनजाने में आधा गाँव सभा से बाहर कर देते हैं।

एक बात मैं ईमानदारी से कहूँ: मुझे पक्का नहीं पता कि किसी राज्य का नियम वॉट्सऐप संदेश को अपने आप में वैध सूचना मानता है या नहीं। मैंने इस पर कोई साफ़ आदेश नहीं पढ़ा। इसलिए मैं उसे तीसरा रास्ता मानता हूँ, पहला कभी नहीं।

2020 की 26 जनवरी को उस पंचायत में भैरूलाल ने नौ टोलों में ढोल बजाया। नाले के पार वाली बस्ती में उसके साथ वार्ड पंच भी गए, जिन्होंने हर तीसरे घर का दरवाज़ा खटखटाया। सुबह दस बजे तक दरी कम पड़ गई, और सचिव पड़ोस के मंदिर से दो और दरियाँ उठा लाए।

रजिस्टर में उस दिन 261 नाम थे। शाम तक एक भी नया नहीं जुड़ा।

जो लिखा गया, वही हुआ

उस 26 जनवरी को सबसे ज़्यादा मेहनत ढोल ने नहीं, एक नीले बॉल-पेन ने की। सरपंच ने कार्यवाही लिखने का काम सचिव पर नहीं छोड़ा। उन्होंने गाँव के स्कूल के एक रिटायर्ड मास्टर जी

को मंच के बगल में बिठाया और कहा, 'जो बोला जाए, वही लिखना। जो मैं चाहूँ, वो नहीं।' मास्टर जी हँसे नहीं। ढाई घंटे में उन्होंने रजिस्टर के ग्यारह पन्ने भरे।

मैंने बीस साल में जितनी ग्राम सभाओं की कार्यवाही पढ़ी है, उनमें से ज़्यादातर एक ही साँचे की थीं: 'सभा सर्वसम्मति से संपन्न हुई। सभी प्रस्ताव पारित हुए।' दो वाक्य। न कौन बोला, न किसने विरोध किया, न कितने हाथ उठे। ऐसी कार्यवाही आपकी रक्षा नहीं करती। वह आपको उस हर बात का ज़िम्मेदार बना देती है जो बाद में उसमें जोड़ दी जाए।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *2018, नागौर ज़िले की एक पंचायत। ग्राम सभा में चरागाह की 14 बीघा ज़मीन पर एक निजी गौशाला को पट्टा देने की बात उठी और भारी विरोध के बाद टल गई। तीन महीने बाद उसी रजिस्टर में, उसी तारीख़ के नीचे, एक प्रस्ताव लिखा मिला कि सभा ने पट्टे की 'सहर्ष अनुशंसा' की है। जगह इसलिए मिल गई थी क्योंकि आख़िरी प्रविष्टि के नीचे आधा पन्ना ख़ाली छोड़ा गया था। गाँव के चार लोगों ने कलेक्टर को शिकायत दी, जाँच में स्याही का रंग अलग निकला, और पट्टा रद्द हुआ। सरपंच कहते रहे कि उन्होंने वह पंक्ति नहीं लिखवाई। हो सकता है सच कह रहे हों। पर दस्तख़त उन्हीं के थे, और उनके विरुद्ध पद के दुरुपयोग की जाँच खुली।*

वह आधा ख़ाली पन्ना ही पूरा अपराध था।

रजिस्टर में क्या, कैसे

कार्यवाही-विवरण (यानी सभा में जो हुआ उसका लिखित ब्योरा) कोई साहित्य नहीं है। वह गवाही है। जिस दिन कोई विवाद अदालत या जाँच अधिकारी तक पहुँचेगा, उस दिन आप वहाँ बोलने के लिए नहीं होंगे, आपका रजिस्टर होगा। इसलिए:

1. **सभा के दौरान ही लिखिए।** घर ले जाकर 'साफ़' करने की आदत छोड़िए। काटा-पीटा हुआ असली रजिस्टर, सुंदर लिखी नक़ल से कहीं ज़्यादा भरोसेमंद है।
2. **शुरू में संख्या और समय।** सभा कितने बजे शुरू हुई, उस घड़ी कितने लोग थे, कोरम के लिए कितने चाहिए थे। अजमेर वाली पंचायत की उस सभा का पहला वाक्य था: 'प्रातः 10:40 पर उपस्थिति 238, आवश्यक कोरम 234।'
3. **हर प्रस्ताव अलग क्रमांक पर।** किसने रखा, किसने समर्थन किया, कितने पक्ष में, कितने विपक्ष में। 'सर्वसम्मति' तभी लिखिए जब सचमुच एक भी हाथ विरोध में न उठा हो।
4. **असहमति नाम के साथ।** जो विरोध करे, उसका नाम और उसकी बात दो पंक्तियों में। यह आपको कमज़ोर नहीं दिखाता; यह साबित करता है कि सभा में बोलने की आज़ादी थी।
5. **आख़िरी पंक्ति के नीचे लकीर।** बची हुई ख़ाली जगह को तिरछी रेखा से काटिए, ताकि कोई कुछ जोड़ न सके।

6. **पढ़कर सुनाइए, फिर दस्तख़त।** अध्यक्ष और सचिव के अलावा कम से कम तीन-चार उपस्थित ग्रामीणों के दस्तख़त, जिनमें एक महिला और एक उस बस्ती का व्यक्ति हो जिसका मुद्दा उठा।
7. **फ़ोटो, और हो सके तो वीडियो।** भरी हुई दरी की फ़ोटो, और कार्यवाही के हर पन्ने की फ़ोटो उसी दिन। कई राज्यों ने सभा की फ़ोटो पोर्टल पर डालने का निर्देश दिया है; अपने राज्य का निर्देश देख लीजिए।

पाँचवें बिंदु पर मेरी राय बदली है। पहले मैं सोचता था कि रजिस्टर बंद अलमारी में रहे, यही सुरक्षा है। नागौर के बाद समझ आया कि ताला बाहर वालों को रोकता है, अंदर वालों को नहीं। लकीर दोनों को रोकती है।

उस दिन, सभा ख़त्म होने के बाद, मास्टर जी ने कार्यवाही ज़ोर से पढ़ी। तीसरे प्रस्ताव पर नाले के पार वाली बस्ती के एक बुज़ुर्ग खड़े हुए। 'मास्टर जी, मैंने 'दो हैंडपंप' कहा था, आपने 'एक' लिखा है।' मास्टर जी ने चश्मा उतारा, पंक्ति काटी, ऊपर 'दो' लिखा, और कटे हुए शब्द के बगल में बुज़ुर्ग से अँगूठा लगवाया।

वह कटा हुआ 'एक' आज भी उस रजिस्टर के पन्ना नंबर सात पर है।

जो बोलते नहीं, वे आते क्यों नहीं

उस रजिस्टर के पन्ना नंबर सात पर एक और बात दर्ज है, जो कटे हुए 'एक' से कम दिखती है। 261 नामों में औरतें 34 थीं। उनमें से एक ने भी कोई प्रस्ताव नहीं रखा। वे दरी के आख़िरी किनारे पर, घूँघट में, एक झुंड बनाकर बैठी थीं, और ढाई घंटे में उनकी तरफ़ से जो एक आवाज़ आई वह एक बच्चे को चुप कराने की थी।

ज़्यादातर सरपंच इसे गाँव की 'परंपरा' कहकर छोड़ देते हैं। मैं भी बरसों तक यही मानता रहा कि भीड़ आ गई तो काम हो गया। अब नहीं मानता। गिनती पूरी होना और आवाज़ पूरी होना, दो अलग चीज़ें हैं, और योजना दूसरी से बनती है।

महिला सभा: पहले अलग, फिर साथ

2019 में राजगढ़ ज़िले (मध्य प्रदेश) की एक पंचायत में सरपंच सुनीता बाई ने ग्राम सभा से नौ दिन पहले आँगनवाड़ी के आँगन में सिर्फ़ औरतों की बैठक बुलाई। समय रखा दोपहर ढाई बजे, जब चूल्हा ठंडा होता है और मर्द खेत पर होते हैं। ग्राम सभा सुबह दस बजे होती थी, यानी ठीक उस वक़्त जब औरतें पानी भर रही होती हैं। यह छोटी-सी बात किसी ने कभी नहीं सोची थी।

आँगन में 70 औरतें आईं। पहला सवाल किसी ने सड़क पर नहीं पूछा। एक औरत बोली, 'बाई सा, हम रोज़ डेढ़ किलोमीटर से पानी लाती हैं, और हैंडपंप उस मोहल्ले में लगता है जहाँ पंच का घर है।' दूसरी ने आँगनवाड़ी के बंद पड़े शौचालय की बात की। घंटे भर में पाँच माँगें

लिखी गई, क्रमांक के साथ, और तय हुआ कि ग्राम सभा में इन्हें एक औरत ख़ुद पढ़ेगी, सरपंच नहीं।

ग्राम सभा में वही औरत खड़ी हुई तो हाथ काँप रहे थे। पर काग़ज़ उसके हाथ में था, और काग़ज़ पर 70 अँगूठे। उस साल उस पंचायत ने ₹1,80,000 का एक पाइपलाइन विस्तार अपनी योजना में डाला, जो पहले की किसी सूची में नहीं था।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *कुछ राज्यों के पंचायत अधिनियम में ग्राम सभा से पहले महिला सभा बुलाना अनिवार्य है; महाराष्ट्र इसका जाना-पहचाना उदाहरण है। कई हिंदी-भाषी राज्यों में यह केवल निर्देश या अभियान के रूप में चलता है, और कुछ में लिखित प्रावधान है ही नहीं। अपने राज्य का अधिनियम और पंचायती राज विभाग के ताज़ा परिपत्र देखिए। जहाँ बाध्यता नहीं है, वहाँ भी महिला सभा बुलाने पर कोई रोक नहीं है।*

सभा कहाँ होती है, यह भी एक फ़ैसला है

नाले के पार वाली बस्ती के 400 मतदाताओं में से उस 26 जनवरी को कितने आए, यह मैंने बाद में गिना। उन्नीस। सभा पंचायत भवन के सामने चबूतरे पर हुई थी, जो गाँव के उस हिस्से में है जहाँ उस बस्ती के लोग आज भी जूते उतारकर निकलते हैं। कोई उन्हें रोकता नहीं। उन्हें रुकना सिखाया गया है।

इसके कुछ सीधे उपाय हैं, जो मैंने काम करते देखे हैं:

- **जगह बदलिए।** साल की चार अनिवार्य सभाओं में से कम से कम एक उस बस्ती के स्कूल या सामुदायिक भवन में रखिए। जमुई ज़िले (बिहार) की एक पंचायत ने 2022 में 2 अक्टूबर की सभा एक दलित टोले के प्राथमिक विद्यालय में की। उपस्थिति उस टोले से 11 से बढ़कर 140 हुई।
- **वार्ड सभा पहले।** जिस वार्ड का मुद्दा है, उसकी अलग बैठक ग्राम सभा से पहले कीजिए, और वहाँ लिखी गई माँगें ग्राम सभा की कार्यवाही में उसी क्रमांक से दर्ज कराइए।
- **बोलने का क्रम तय कीजिए।** हर प्रस्ताव पर पहला बोलने का मौक़ा उस बस्ती को दीजिए जिसका काम है। जब दबंग पहले बोल देते हैं, बाक़ी सिर्फ़ सिर हिलाते हैं।
- **मंच पर कौन बैठा है, देखिए।** कुर्सियाँ अगर सिर्फ़ चार लोगों के लिए हैं, तो वे चार हमेशा वही होंगे।

मुझे ईमानदारी से नहीं पता कि जगह बदलने से कितने साल में फ़र्क़ पक्का होता है। जमुई वाली पंचायत में अगली सभा फिर पुरानी जगह हुई, और संख्या फिर गिर गई। एक बार का न्योता आदत नहीं बनता।

राजगढ़ में, अगले साल की महिला सभा से एक दिन पहले, सुनीता बाई के पास वही औरत आई जिसके हाथ काँपे थे। बोली, 'बाई सा, इस बार काग़ज़ मैं लिखूँगी। आप बस दरी बिछवा

देना।'

जब सभा भड़क जाए

2018 की 15 अगस्त। बूँदी ज़िले की एक पंचायत में उस दिन चार सौ से ऊपर लोग आए थे। इतनी भीड़ किसी ने बुलाई नहीं थी; अफ़वाह ने बुलाई थी। गाँव में बात फैली थी कि तालाब की मछली की नीलामी के ₹2,40,000 पंचायत खाते में आए ही नहीं। झंडा उतरा भी नहीं था कि पीछे से आवाज़ आई, 'सरपंच जी, पहले हिसाब, फिर भाषण।'

सरपंच ओमप्रकाश मेरे पुराने प्रशिक्षु थे। मैं उस दिन दरी के पीछे बैठा था, और सच कहूँ तो मुझे लगा था कि सभा दस मिनट में बिखर जाएगी। ऐसा हुआ नहीं। ओमप्रकाश ने तीन काम किए, और तीनों में से किसी में भी हिम्मत से ज़्यादा तरीक़ा था।

पहला, उन्होंने बोलने वाले को माइक दे दिया। चुप कराने की कोशिश नहीं की। जो आदमी चिल्लाकर बोलता है, उसे जब माइक मिलता है तो अक्सर उसकी आवाज़ अपने आप धीमी हो जाती है, क्योंकि अब सब उसे सुन रहे हैं।

दूसरा, उन्होंने सचिव से कहा, 'जो ये बोल रहे हैं, शब्द-शब्द लिखिए। नाम के साथ।' भीड़ ने यह सुना। आरोप लगाने वाले ने भी सुना।

तीसरा, उन्होंने उसी दिन जवाब देने का दावा नहीं किया। बोले, 'नीलामी की रसीद और बैंक की एंट्री मैं अगले मंगलवार को इसी चबूतरे पर रखूँगा। आप में से पाँच लोग चुन लीजिए जो उस दिन पासबुक ख़ुद देखेंगे।' पाँच नाम वहीं तय हुए और कार्यवाही में लिखे गए।

उसके बाद सभा अपने बाक़ी एजेंडे पर लौट आई। पूरी नहीं, पर लौट आई।

भड़की हुई सभा में आपके पास कुछ ही औज़ार होते हैं। जो मैंने बार-बार काम करते देखे हैं:

1. **विरोध दर्ज कीजिए, उसका सार नहीं।** 'कुछ ग्रामीणों ने आपत्ति की' लिखना बेकार है। 'रामनिवास (वार्ड 6) ने कहा कि नीलामी का पैसा खाते में नहीं आया' लिखिए। बाद में जाँच हुई तो यही पंक्ति दिखाएगी कि सवाल सभा में खुलकर उठा था और आपने उसे दबाया नहीं।
2. **आरोप और माँग को अलग खानों में रखिए।** हैंडपंप की माँग प्रस्ताव बनती है। पैसे का आरोप जाँच का बिंदु बनता है, और उसके आगे तारीख़ लिखी जाती है कि जवाब कब और कहाँ मिलेगा।
3. **सभा स्थगित करनी पड़े तो कारण और समय लिखिए।** 'हंगामे के कारण 11:40 पर सभा स्थगित, अगली बैठक की सूचना नियमानुसार दी जाएगी।' स्थगित सभा दोबारा कब और किस सूचना-अवधि से बुलानी है, यह आपके राज्य का अधिनियम और नियम तय करते हैं; अंदाज़े से मत चलिए।
4. **पुलिस आख़िरी रास्ता है, पहला नहीं।** जिस सभा में वर्दी आ गई, उस बस्ती के लोग अगले कई साल नहीं आते।

कच्ची फ़ाइल *2016 में अलवर ज़िले की एक पंचायत में आवास योजना की सूची पर झगड़ा हुआ। सरपंच ने सभा बीच में ख़त्म कर दी, पर रजिस्टर में लिखवाया 'सभा शांतिपूर्ण संपन्न हुई, सूची सर्वसम्मति से पारित।' चार उपस्थित लोगों ने शिकायत की, और जाँच में यह पंक्ति झूठी पाई गई। सूची रद्द हुई, और सरपंच को कारण बताओ नोटिस मिला। झगड़े से कुछ नहीं बिगड़ा था। झगड़े को छिपाने से बिगड़ा।*

मुझे पक्का नहीं पता कि हर भड़की सभा बचाई जा सकती है। कुछ सभाएँ किसी और की राजनीति के लिए भड़काई जाती हैं, और वहाँ आपका तरीक़ा कितना भी सही हो, नतीजा वही रहता है। पर बूँदी में ऐसा नहीं था। वहाँ लोग सचमुच जानना चाहते थे।

अगले मंगलवार चबूतरे पर क़रीब साठ लोग आए। पाँचों चुने हुए लोगों ने पासबुक पलटी। ₹2,40,000 खाते में थे, नीलामी के ग्यारह दिन बाद जमा हुए। रामनिवास ने पासबुक बंद की, कुछ देर चुप रहे, फिर दूसरा सवाल पूछ लिया, जो पहले से ज़्यादा कठिन था।

'ठीक है, पैसा आया। अब यह बताइए, यह पैसा नाली पर लग सकता है या नहीं? और पिछले साल जो दिल्ली वाला पैसा आया था, वो हैंडपंप पर क्यों नहीं लगा?'

ओमप्रकाश ने सचिव की तरफ़ देखा। सचिव ने फ़ाइल की तरफ़।

अध्याय 4

पंचायत का पैसा

चार फ़ाइलें, एक खाता

जवाब फ़ाइल में ही था, पर एक फ़ाइल में नहीं, चार में। बूँदी की उस पंचायत के सचिव ने अलमारी से चारों निकालीं और चबूतरे पर एक के ऊपर एक रख दीं। ऊपर वाली पर लाल स्याही से लिखा था '15वाँ वि.आ.', उसके नीचे 'SFC', फिर एक मोटा बंडल जिस पर 'मनरेगा/SBM' का पर्चा चिपका था, और सबसे नीचे एक पतली-सी फ़ाइल: 'नीलामी, कर, किराया'। रामनिवास ने सबसे पतली वाली उठाई। 'असली पैसा तो यही है न, जो अपना है?'

वे आधे सही थे। गाँव वालों को लगता है कि पंचायत के पास एक खाता है और उसमें एक तरह का पैसा। काग़ज़ पर खाते कई हो सकते हैं, पर उससे बड़ी बात यह है कि **हर रुपये के साथ उसके आने का दरवाज़ा भी चिपका रहता है**, और वही तय करता है कि वह कहाँ जा सकता है। आप सरपंच हैं, तो ये चार दरवाज़े आपको उसी तरह पहचानने हैं जैसे खेत की मेड़ें।

पहला दरवाज़ा: केंद्रीय वित्त आयोग

रामनिवास जिसे 'दिल्ली वाला पैसा' कह रहे थे, उसका बड़ा हिस्सा पंद्रहवें वित्त आयोग का अनुदान है, जो केंद्र से राज्य के रास्ते सीधे पंचायत के खाते में आता है। इसके दो हिस्से हैं। **60 प्रतिशत बँधा अनुदान**, जो पेयजल, वर्षा-जल संचयन, स्वच्छता और ODF की स्थिति बनाए रखने पर ही लग सकता है। और **40 प्रतिशत खुला अनुदान**, जिसे आप स्थानीय ज़रूरत के काम पर लगा सकते हैं, बस वेतन और स्थापना-ख़र्च पर नहीं।

बूँदी में पिछले साल ₹6,80,000 आए थे। बँधे हिस्से से सामुदायिक शौचालय की मरम्मत हुई, खुले से श्मशान की चारदीवारी। हैंडपंप ग्राम सभा की प्राथमिकता-सूची में नौवें नंबर पर था, और पैसा सातवें पर ख़त्म हो गया। नियम ने नहीं रोका था। सूची ने रोका था।

दूसरा दरवाज़ा: राज्य वित्त आयोग

हर राज्य अपना वित्त आयोग बनाता है, जो तय करता है कि राज्य के कर-राजस्व का कितना हिस्सा पंचायतों तक जाएगा। यहीं से सबसे ज़्यादा उलझन पैदा होती है, क्योंकि शर्तें, किस्तें और मात्रा, तीनों राज्य-दर-राज्य बदलती हैं। राजस्थान का SFC पैसा जिस नियम से चलता है, ज़रूरी नहीं कि बिहार या छत्तीसगढ़ में भी वही चले। कहीं इसका एक हिस्सा रखरखाव के लिए अलग रखना पड़ता है, कहीं नहीं। इसलिए राज्य वित्त आयोग की राशि के मार्गदर्शी निर्देश की प्रति, जो पंचायती राज विभाग हर साल या हर आयोग के साथ जारी करता है, आपकी अलमारी में होनी चाहिए। सचिव की याददाश्त में नहीं।

तीसरा दरवाज़ा: योजनाओं का पैसा

मनरेगा, स्वच्छ भारत मिशन, जल जीवन मिशन, आवास योजना: इनका पैसा पंचायत से होकर गुज़रता है, पर पंचायत का होता नहीं। यह **किसी तय काम के लिए, तय दरों और तय प्रक्रिया से** आता है। मनरेगा की मज़दूरी सीधे मज़दूर के खाते में जाती है; आपके हाथ में केवल काम की स्वीकृति, मस्टर रोल और माप रहती है। SBM के शौचालय की राशि से हैंडपंप लगाना ठीक वैसा है जैसे बेटी की शादी के लिए उधार लेकर ट्रैक्टर ख़रीद लेना। पैसा घर में ही रहा, फिर भी हिसाब ग़लत है।

चौथा दरवाज़ा: अपनी आय

और फिर वह पतली फ़ाइल। गृह कर, बाज़ार शुल्क, सामुदायिक भवन का किराया, तालाब की मछली या सिंघाड़े की नीलामी। बूँदी के ₹2,40,000 इसी दरवाज़े से आए थे। यह पैसा पंचायत का अपना है, और ग्राम पंचायत का विधिवत प्रस्ताव हो तो अधिनियम में दिए कामों में से किसी पर भी लग सकता है, नाली पर भी।

सच कहूँ तो मैं ख़ुद सालों तक अपनी आय को प्रशिक्षण में आख़िरी दस मिनट देता था। लगता था, ₹30-40 हज़ार सालाना से क्या होगा, जब वित्त आयोग का पैसा लाखों में है। मेरी राय राजस्थान की ही एक पंचायत ने बदली, जिसके रजिस्टर मैंने 2019 में पहली बार देखे थे। पर वह क़िस्सा अपनी जगह आएगा।

बूँदी में उस शाम रामनिवास ने पतली फ़ाइल वापस ढेर पर रखी, फिर उसे उठाकर सबसे ऊपर रख दिया। सचिव ने कुछ नहीं कहा। ओमप्रकाश ने रजिस्टर खोला और पूछा, 'नाली का प्राक्कलन कितने का बनेगा, JEN साहब से कब पूछें?'

बँधा और खुला: वह भेद जो सबसे ज़्यादा सरपंचों को नोटिस दिलवाता है

ओमप्रकाश का सवाल सीधा था, पर उसके पीछे एक दूसरा सवाल छिपा था जो उन्होंने पूछा नहीं: नाली किस पैसे से बनेगी? बूँदी के उस रजिस्टर में नाली को 'स्वच्छता' के खाने में लिखें तो बँधा अनुदान खुलता है। 'सड़क' के खाने में लिखें तो खुला। और इसी एक खाने के चुनाव पर मैंने सबसे ज़्यादा वसूली नोटिस बनते देखे हैं।

2022 में सीकर ज़िले की एक पंचायत ने बँधे अनुदान से ₹3,20,000 का एक काम करवाया। eGramSwaraj पर उसका नाम दर्ज था 'नाली सहित सीसी सड़क'। ऑडिट टीम आई, माप पुस्तिका खोली, और ऑडिटर ने सरपंच से एक ही बात पूछी: 'सरपंच जी, नाली डेढ़ फ़ुट चौड़ी है, सड़क बारह फ़ुट। पैसा किसका लगा?' माप के हिसाब से नाली का हिस्सा क़रीब ₹48,000 बैठा। बाक़ी ₹2,72,000 पर आपत्ति लगी। सरपंच का कहना था कि पानी सड़क पर भरता था, इसलिए सड़क भी स्वच्छता का हिस्सा है। तर्क में दम था। नियम में नहीं।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *सीकर, 2022। बँधे अनुदान से 'नाली सहित सीसी सड़क', कुल ₹3,20,000। ऑडिट ने सड़क वाले हिस्से को अनुदान की शर्तों से बाहर माना और आपत्ति लगाई। अगले साल पंचायत को खुले अनुदान की राशि से वह रक़म बँधे खाते में वापस समायोजित करनी पड़ी, यानी गाँव ने एक ही सड़क की क़ीमत दो बार चुकाई। जब तक समायोजन पूरा नहीं हुआ, आपत्ति हर ऑडिट रिपोर्ट में दोहराई जाती रही।*

बँधे के भीतर भी दो खाने

ज़्यादातर सरपंच इतना जानते हैं कि 60 प्रतिशत बँधा है। कम लोग जानते हैं कि उस 60 के भीतर भी आधा-आधा बँटवारा है: लगभग 30 प्रतिशत पेयजल, वर्षा-जल संचयन और जल-पुनर्चक्रण के लिए, और लगभग 30 प्रतिशत स्वच्छता और ODF की स्थिति बनाए रखने के लिए। अगर किसी गाँव में एक ज़रूरत पूरी हो चुकी है, तो प्रमाणित करके उसका पैसा दूसरी में लगाया जा सकता है, पर वह प्रमाणन किसके दस्तख़त से होगा, यह आपके राज्य का निर्देश तय करता है। बिना काग़ज़ के 'हमारे यहाँ तो पानी पूरा है' कह देना काफ़ी नहीं।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *पंद्रहवें वित्त आयोग के अनुदान केंद्र के वित्त मंत्रालय और पंचायती राज मंत्रालय के परिचालन दिशा-निर्देशों से चलते हैं। खुला अनुदान वेतन और स्थापना-ख़र्च पर नहीं लग सकता। बँधे अनुदान के दोनों घटकों के बीच पैसा ले जाने की शर्तें, और कौन-सा काम 'स्वच्छता' में गिना जाएगा, इसकी व्याख्या राज्य का पंचायती राज विभाग अपने परिपत्रों में करता है। अपने राज्य का ताज़ा परिपत्र देखिए, पिछले कार्यकाल वाला नहीं।*

खुले का भी एक ताला है

खुले अनुदान को लोग 'मर्ज़ी का पैसा' समझ लेते हैं। गया ज़िले की एक पंचायत में 2023 में कंप्यूटर ऑपरेटर को ₹8,000 महीना इसी से दिया जाता रहा, ग्यारह महीने तक। ₹88,000। मुखिया जी का कहना था, 'पोर्टल चलाना है तो आदमी तो चाहिए।' बात सही थी, पर ऑपरेटर का मानदेय स्थापना-ख़र्च है, और खुले अनुदान का दरवाज़ा उस पर बंद है। उस आदमी का पैसा कहीं और से आना चाहिए था, शायद अपनी आय से, शायद राज्य की किसी अलग मद से।

अब एक बात साफ़ कह दूँ जिस पर मैं ख़ुद पक्का नहीं हूँ। खुली नाली, जो सिर्फ़ बरसात का पानी बहाती है, वह 'तरल अपशिष्ट प्रबंधन' में गिनी जाएगी या नहीं, इस पर मैंने दो राज्यों के ऑडिटरों को दो अलग फ़ैसले देते देखा है। एक ने मान लिया, दूसरे ने आपत्ति लगा दी। ऐसे धुँधले मामलों में मेरी सलाह इतनी है कि काम शुरू करने से पहले ब्लॉक से लिखित राय ले लीजिए और उसकी प्रति माप पुस्तिका के साथ नत्थी कर दीजिए।

बूँदी में ओमप्रकाश ने यही किया। रजिस्टर में नाली के आगे पेंसिल से लिखा 'किस मद से? BDO से पूछना', और फिर उस पेंसिल को रबर से मिटाकर पेन से दोबारा लिखा। सचिव ने झाँककर देखा। 'पेंसिल ही रहने देते, बदलना पड़ सकता है।'

'इसीलिए पेन से लिखा है,' ओमप्रकाश बोले।

अपनी आय: वह रसीद जो काटने में हाथ काँपता है

जिस पंचायत ने मेरी राय बदली, वह राजसमंद ज़िले में है। वहाँ के सरपंच देवीलाल जी चुनाव से पहले पंद्रह साल रोडवेज़ में कंडक्टर रहे थे। 2019 में जब मैंने उनके रजिस्टर पहली बार खोले, तो 2016-17 में पंचायत की कुल अपनी आय ₹58,000 दर्ज थी, जिसमें से ज़्यादातर सामुदायिक भवन का किराया था। 2019-20 के अंत तक वही आँकड़ा ₹2,36,000 पर पहुँच गया। चार गुना। न कोई नई फ़ैक्ट्री आई थी, न कोई मेला लगा था।

मैंने पूछा कि यह हुआ कैसे। देवीलाल जी हँसे। 'चौधरी जी, बस में चालीस साल के आदमी से भी टिकट माँगते थे, शर्म नहीं आती थी। यहाँ अपने गाँव से माँगने में शर्म क्यों आए?'

यही असली बात है। ज़्यादातर सरपंच गृह कर इसलिए नहीं वसूलते कि उन्हें नियम नहीं पता। वे इसलिए नहीं वसूलते कि अगला चुनाव सामने दिखता है, और कर की रसीद काटना वोट काटने जैसा लगता है। **जो सरपंच गृह कर माँगने में शर्माता है, वह पंचायत को हर छोटे ख़र्च के लिए ब्लॉक का मुँह ताकने वाला भिखारी बना देता है।** गया के उस कंप्यूटर ऑपरेटर का ₹88,000 का मानदेय याद कीजिए। अपनी आय होती, तो वह ऑडिट आपत्ति बनता ही नहीं।

देवीलाल जी ने क्या किया

उन्होंने कोई चमत्कार नहीं किया। काम उबाऊ था और धीमा:

1. **कर-निर्धारण रजिस्टर नया बनवाया।** पुराना रजिस्टर 2009 का था और उसमें 214 मकान दर्ज थे। वार्ड पंचों के साथ घर-घर गिनती हुई तो 389 निकले। पंद्रह सालों में बने 175 मकान काग़ज़ पर थे ही नहीं।
2. **दरें ग्राम पंचायत के प्रस्ताव से तय कीं** और ग्राम सभा में पढ़कर सुनाई। कच्चे मकान की दर अलग, पक्के की अलग, दुकान की अलग।
3. **पहली रसीद अपने घर की काटी**, दूसरी अपने सगे भाई की। दोनों की कार्बन-प्रति पंचायत भवन के नोटिस बोर्ड पर चिपका दी।
4. **तालाब की नीलामी खुली करवाई।** पहले मछली का ठेका एक ही परिवार को 'आपसी समझ' से ₹4,000 सालाना में मिलता था। मुनादी करके, तारीख़ तय करके खुली बोली हुई। ₹31,000 पर छूटा।
5. **हाट में ठेले वालों से ₹10 प्रति हाट शुल्क** लिया, और उसी पैसे से हाट वाली जगह पर दो बल्ब और एक पानी की टंकी लगवाई, ताकि ठेले वाले देख सकें कि उनका दस रुपया कहाँ गया।

सबसे दिलचस्प चाल चौथी नहीं, तीसरी थी। देवीलाल जी ने किसी बकायादार का नाम कहीं नहीं लिखा। उन्होंने बस हर महीने नोटिस बोर्ड पर उन लोगों की सूची लगाई जिन्होंने कर भर दिया था। लोग सूची पढ़ते थे और अपना नाम ढूँढते थे। जिनका नाम नहीं मिलता था, उनसे कोई कुछ नहीं कहता था। कहने की ज़रूरत भी नहीं पड़ती थी।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *पंचायत कौन-से कर, शुल्क और फ़ीस लगा सकती है, उनकी अधिकतम दर क्या होगी, और वसूली न होने पर क्या प्रक्रिया अपनानी है, यह पूरी तरह आपके राज्य का पंचायती राज अधिनियम और उसके तहत बने नियम तय करते हैं। कुछ राज्यों में गृह कर अनिवार्य है, कुछ में ऐच्छिक, कुछ में उसका नाम और ढाँचा ही अलग है। कर लगाने से पहले अधिनियम की संबंधित धारा, ताज़ा अधिसूचना और ग्राम पंचायत का विधिवत प्रस्ताव, तीनों आपकी फ़ाइल में होने चाहिए। किसी व्यक्ति की सरकारी सेवा या प्रमाणपत्र को कर भुगतान से बाँधना आपके अधिकार से बाहर हो सकता है।*

जहाँ मुझे यक़ीन नहीं

ईमानदारी से कहूँ तो मैं नहीं जानता कि देवीलाल जी का तरीक़ा हर जगह चल जाएगा। बिहार के जिन गाँवों में मैंने काम किया, वहाँ कई पंचायतों में दशकों से किसी ने गृह कर का नाम तक नहीं सुना था। वहाँ पहले साल की वसूली ग़ुस्सा भी लाती है और अफ़वाहें भी: 'मुखिया अब घर पर भी टैक्स लगाएगा।' मधुबनी के एक मुखिया ने 2022 में शुरुआत की और पहले साल कुल

₹11,400 जमा कर पाए। दूसरे साल ₹26,000। धीमा है। पर रजिस्टर बन गया है, और अगला मुखिया शून्य से शुरू नहीं करेगा।

राजसमंद में मैंने देवीलाल जी से आख़िरी सवाल पूछा था कि चुनाव में इसका नुक़सान तो नहीं होगा। उन्होंने जवाब नहीं दिया। दराज़ खोलकर रसीद बुक निकाली, आधी कटी हुई, और उसका एक कार्बन-पन्ना मेरी तरफ़ घुमा दिया। उस पर उनके सबसे बड़े विरोधी का नाम था, ₹340, तारीख़ 14 मार्च।

वर्जित ख़र्च: जहाँ अच्छी नीयत भी काम नहीं आती

ऑडिट आपत्तियों की जो फ़ाइलें मैंने बीस साल में पढ़ी हैं, उनमें चोरी के मामले कम निकले और भलमनसाहत के ज़्यादा। सरपंच ने पैसा जेब में नहीं डाला। उसने बस ग़लत जगह ख़र्च कर दिया, यह सोचकर कि गाँव का काम है तो गाँव के पैसे से होगा। ऑडिटर ऐसा नहीं सोचता। वह मद देखता है, नियम देखता है, और फिर वसूली नोटिस पर सरपंच का नाम लिखता है।

सबसे आम जाल स्वागत-सत्कार का है। 2018 में अलवर ज़िले की एक पंचायत में विधायक जी पेयजल टंकी का लोकार्पण करने आए। टेंट, साफ़े, माला, चाय-पकौड़ी, सब मिलाकर ₹14,600 का बिल बना और खुले अनुदान से चुका दिया गया। सरपंच का तर्क सीधा था: 'मेहमान आए तो चाय भी न पिलाएँ?' चाय पिलाइए। पर अपनी जेब से, या किसी ऐसी मद से जिसकी अनुमति आपके राज्य के नियम लिखित में देते हों। वित्त आयोग का पैसा पानी की पाइप के लिए है, विधायक जी के पकौड़ों के लिए नहीं। तीन साल बाद ₹14,600 की वसूली सरपंच के नाम निकली। विधायक जी तब तक दूसरी पार्टी में जा चुके थे।

दूसरा जाल मूर्तियों और स्मारकों का है, और यह सबसे भावुक जाल है। 2021 में रतलाम ज़िले की एक पंचायत ने चौराहे पर एक महापुरुष की प्रतिमा लगवाई, ₹2,10,000 की, खुले अनुदान से। सरपंच ने मुझसे कहा था, 'इस पर कौन आपत्ति करेगा, चौधरी जी? कोई करेगा तो गाँव उसे खड़ा नहीं होने देगा।' ऑडिटर ने आपत्ति की, और गाँव ने उसे खड़े रहने दिया, क्योंकि वह भोपाल में बैठा था। मूर्ति, धार्मिक भवन, किसी समुदाय-विशेष का चबूतरा: इन पर वित्त आयोग का पैसा लगाना लगभग हर राज्य में आपत्ति का सीधा न्योता है।

तीसरा जाल चुपचाप आता है: निजी ज़मीन पर सरकारी काम।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *कैमूर ज़िले की एक पंचायत ने 2020 में 140 मीटर का पक्का रास्ता बनवाया, ₹3,85,000 की लागत से। रास्ता गाँव की मुख्य सड़क से एक बड़े किसान के खलिहान तक जाता था। ग्राम सभा ने प्रस्ताव पास किया था, क्योंकि रास्ते पर आठ और परिवार भी रहते थे। दिक़्क़त यह निकली कि राजस्व रिकॉर्ड में 90 मीटर ज़मीन उसी किसान के खसरे में दर्ज थी। न दान-पत्र था, न रजिस्ट्री, न कोई अनापत्ति पत्र। ऑडिट ने पूछा कि यह परिसंपत्ति पंचायत के परिसंपत्ति रजिस्टर में कैसे चढ़ेगी, जब*

ज़मीन पंचायत की है ही नहीं। जवाब किसी के पास नहीं था। पूरी राशि संदिग्ध ख़र्च में गई, और जाँच के दौरान मुखिया का अगले काम का भुगतान रोक दिया गया।

सीधा नियम: **जिस ज़मीन का खसरा नंबर आपकी फ़ाइल में नहीं, उस पर एक ईंट भी नहीं।** अगर ज़मीन निजी है और मालिक देने को तैयार है, तो राज्य की प्रक्रिया के अनुसार लिखित दान-पत्र या हस्तांतरण पहले, काम बाद में।

बाक़ी जाल छोटे हैं, पर उतने ही पक्के:

- **बँधे अनुदान का पैसा खुले काम पर**, जैसे पेयजल वाली राशि से सामुदायिक भवन की पुताई।
- **वेतन, मानदेय या भत्ता** खुले अनुदान से, जैसे गया का ₹88,000 वाला ऑपरेटर।
- **गाड़ी का किराया और डीज़ल** बिना लॉग-बुक के, 'BDO ऑफ़िस आना-जाना था' लिखकर।
- **एक ही काम दो योजनाओं से**, जहाँ मनरेगा की मज़दूरी और वित्त आयोग की सामग्री एक ही माप पुस्तिका में न जुड़ी हों।
- **ठेकेदार को अग्रिम भुगतान**, काम शुरू होने से पहले, 'भरोसे पर'।
- **नक़द भुगतान**, जहाँ नियम खाते से भुगतान माँगता है।

क़ानून क्या कहता है *कौन-सा ख़र्च किस मद से वैध है, यह केंद्रीय वित्त आयोग के दिशानिर्देश, आपके राज्य का पंचायती राज अधिनियम और उसके वित्तीय नियम मिलकर तय करते हैं। स्वागत-सत्कार या समारोह पर सीमित ख़र्च की अनुमति कुछ राज्यों में अपनी आय से है, कुछ में बिल्कुल नहीं। संदेह हो तो ब्लॉक से लिखित राय लीजिए, मौखिक 'हाँ' ऑडिट में किसी काम की नहीं।*

इन सब मामलों में एक बात साझा थी, जो मुझे देर से समझ आई। हर ग़लत ख़र्च किसी न किसी काग़ज़ पर दर्ज था: बिल, वाउचर, कैश बुक की एक पंक्ति। सरपंच ने उस पंक्ति को कभी पढ़ा नहीं था। धार ज़िले के एक सरपंच ने 2022 के ऑडिट में अपनी कैश बुक पहली बार पूरी खोली, पन्ना 47 पर रुके, और ऑडिटर से धीरे से पूछा, 'यह दस्तख़त मेरे ही हैं न?'

ऑडिटर ने चश्मा उतारा और कहा, 'सरपंच जी, यही तो मैं आपसे पूछने वाला था।'

अध्याय 5

काग़ज़, खाता और पोर्टल

बुनियादी रजिस्टर: कौन सा रजिस्टर क्या बचाता है

पंचायत भवन की अलमारी में सबसे पतला रजिस्टर अक्सर सबसे महँगा पड़ता है। 2018 में झालावाड़ ज़िले की एक पंचायत के ऑडिट के दौरान मैं बरामदे की दरी पर बैठा था, जब ऑडिटर ने स्टॉक रजिस्टर माँगा। साठ पन्नों के उस रजिस्टर में कुल नौ प्रविष्टियाँ थीं। आख़िरी 2016 की थी: 'सीमेंट 120 कट्टे प्राप्त।' उसके बाद कोई निर्गम (सामान जारी करने की प्रविष्टि) नहीं था। कट्टे किस काम में लगे, किसने उठाए, किस दिन, कुछ भी दर्ज नहीं था।

सरपंच बोले, 'साहब, स्कूल की चारदीवारी में लगे, पूरा गाँव जानता है।'

ऑडिटर ने रजिस्टर बंद किया। 'पूरा गाँव जानता है, यह कौन-से रजिस्टर का नाम है?'

₹320 प्रति कट्टे के हिसाब से ₹38,400 की वसूली का नोटिस बना। चारदीवारी आज भी खड़ी है, और उस पर लगा सीमेंट असली था। काग़ज़ नहीं था।

हर रजिस्टर एक अलग सवाल का जवाब देता है, और ऑडिट में हर सवाल अलग दिन पूछा जाता है। इसलिए एक रजिस्टर का पक्का होना दूसरे की कमी नहीं ढकता। राज्यों में इनके नाम और प्रारूप थोड़े बदलते हैं (कहीं कैश बुक को रोकड़ बही कहते हैं), इसलिए अपने राज्य के पंचायत लेखा नियम देख लीजिए। पर मूल ढाँचा लगभग हर जगह यही है:

1. **कैश बुक:** पैसा किस दिन आया, किस दिन गया, किस मद से। यह आपको उस सवाल से बचाती है जो सबसे पहले पूछा जाता है: 'पैसा कहाँ गया?' इसे रोज़ बंद होना चाहिए, और महीने में एक बार बैंक पासबुक से मिलान ज़रूरी है।
2. **स्टॉक रजिस्टर:** सामान आया कितना और किस काम को कितना दिया गया। ऊपर वाले 120 कट्टे इसी की कमी से वसूली बन गए।
3. **परिसंपत्ति रजिस्टर:** पंचायत की मिल्कियत क्या है: भवन, हैंडपंप, तालाब, सड़क, नाली, हर एक की जगह, लागत और बनने का साल। यह आपको दोहरे काम के आरोप से बचाता है।

4. **माप पुस्तिका:** ज़मीन पर काम कितना हुआ। JEN इसमें नाप दर्ज करता है, और भुगतान इसी नाप पर टिकता है, ठेकेदार के बिल पर नहीं।
5. **बिल-वाउचर फ़ाइल:** कैश बुक की हर पंक्ति के पीछे एक काग़ज़। वाउचर का नंबर कैश बुक में और कैश बुक का पन्ना वाउचर पर, ताकि कोई भी आदमी दोनों तरफ़ से रास्ता ढूँढ़ सके।

सच कहूँ तो बीस साल पहले मुझे परिसंपत्ति रजिस्टर सबसे फ़ालतू लगता था। प्रशिक्षण में मैं उसे आख़िर में, जल्दी-जल्दी निपटा देता था। राय भिंड ज़िले की एक पंचायत ने बदली। 2021 में वहाँ शिकायत हुई कि एक ही 300 मीटर की सीसी सड़क दो बार काग़ज़ पर बनी है, एक बार 2015 में और एक बार 2020 में। सरपंच के पास इसका कोई जवाब नहीं था कि दूसरी सड़क अलग गली में है, क्योंकि पहली सड़क किसी रजिस्टर में दर्ज ही नहीं थी। उसकी लंबाई, उसके छोर, उसका साल, कुछ नहीं। जाँच ग्यारह महीने चली। अंत में पुराने पटवारी की एक हाथ से बनी नक्शा-पर्ची काम आई, जो संयोग से उसकी डायरी में दबी मिल गई थी। मुझे आज तक पक्का नहीं पता कि वह पर्ची न मिलती तो क्या होता।

इन पाँचों में एक बात साझा है जिसे नए सरपंच अक्सर उल्टा समझते हैं। रजिस्टर सचिव भरता है, पर उसका बोझ आप उठाते हैं। हर पन्ने के नीचे जगह आपके दस्तख़त के लिए छोड़ी गई है, और ऑडिटर पहले वही जगह देखता है।

झालावाड़ वाला स्टॉक रजिस्टर मैंने 2023 में उसी पंचायत में फिर देखा। नया सरपंच आ चुका था, नए रजिस्टर खुल चुके थे। पुराना अलमारी के सबसे निचले ख़ाने में पड़ा था, नौ प्रविष्टियों के बाद इक्यावन कोरे पन्ने।

माप पुस्तिका: इंजीनियर के अंक, आपकी ज़िम्मेदारी

माप पुस्तिका देखने में सबसे सीधा रजिस्टर है। लंबाई, चौड़ाई, गहराई, गुणा, और नीचे कुल मात्रा। ज़्यादातर सरपंच इसे खोलते तक नहीं, क्योंकि उनके मन में बैठा है कि यह इंजीनियर का काग़ज़ है, उसकी भाषा है, उसका हिसाब है। अंक उसी के हैं। पर भुगतान के आदेश पर दस्तख़त आपके होते हैं, और जिस दिन नाप ग़लत निकलता है, वसूली के नोटिस में पहला नाम अक्सर आपका होता है।

2019 में सीकर ज़िले की एक पंचायत में पक्की नाली बनी। माप पुस्तिका में JEN ने लंबाई 180 मीटर लिखी, और उसी आधार पर ठेकेदार को ₹2,10,000 का भुगतान हुआ। डेढ़ साल बाद एक वार्ड पंच ने शिकायत की। जाँच दल फ़ीता लेकर आया तो नाली 142 मीटर निकली। अड़तीस मीटर काग़ज़ पर थे, ज़मीन पर नहीं।

सरपंच का पहला जवाब वही था जो मैं सैकड़ों बार सुन चुका हूँ। 'साहब, मैं कोई इंजीनियर हूँ? जेईएन साहब ने नाप लिखा, मैंने भरोसा किया।'

जाँच अधिकारी ने पन्ना पलटकर उनके दस्तख़त दिखाए। 'भरोसा किया, तो यहाँ लिखा क्यों कि काम मौक़े पर देखकर संतुष्ट हूँ?'

वसूली JEN और सरपंच, दोनों पर बराबर बँटी। ₹44,000 के आसपास हर एक के हिस्से आया। ठेकेदार तब तक दूसरे ज़िले में काम ले चुका था।

आपसे यह उम्मीद नहीं कि आप इंजीनियर का काम करें। उम्मीद यह है कि आप देखें कि जो लिखा है, वह ज़मीन पर है। इसके लिए फ़ीता और आधा घंटा काफ़ी है। भुगतान से पहले:

1. माप पुस्तिका की आख़िरी प्रविष्टि की तारीख़ देखिए। अगर नाप उसी दिन का है जिस दिन काम शुरू हुआ था, तो कुछ गड़बड़ है।
2. कम से कम एक नाप ख़ुद मौक़े पर जाकर मिलाइए: नाली की लंबाई, कमरे की दीवार, सड़क की चौड़ाई। एक वार्ड पंच साथ ले जाइए।
3. देखिए कि प्रविष्टियाँ स्याही में हैं, कहीं ओवरराइटिंग नहीं है, और कटे हुए अंक पर JEN के छोटे दस्तख़त हैं।
4. नाप के नीचे बची ख़ाली लाइनें तिरछी रेखा से कटी हों, ताकि बाद में कोई मद जोड़ी न जा सके।
5. जहाँ आपके राज्य के नियम में सहायक अभियंता की जाँच-माप (चेक मेज़रमेंट) ज़रूरी है, वहाँ उसके बिना अंतिम बिल पास मत कीजिए।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *2020, धार ज़िला (म.प्र.)। एक सामुदायिक भवन की माप पुस्तिका में पेंसिल से लिखे नाप बाद में स्याही से भर दिए गए। पेंसिल के निशान रबर से मिटाए गए थे पर काग़ज़ की सतह पर दबाव बचा था। ऑडिटर ने पन्ना धूप की ओर झुकाकर पढ़ लिया। मूल नाप से ₹27,600 ज़्यादा का भुगतान हुआ था। परिणाम: वसूली आदेश, और JEN के ख़िलाफ़ विभागीय जाँच। सरपंच का नाम आदेश में इसलिए आया क्योंकि उन्होंने उसी पन्ने पर 'सत्यापित' लिखा था।*

मैं यह मानता हूँ कि मेरी यह सलाह कई जगह व्यवहार में टकराती है। एक JEN के पास कभी-कभी तीस-चालीस पंचायतें होती हैं, और जब सरपंच फ़ीता लेकर उसके पीछे चलता है तो वह इसे अपमान समझता है। कुछ सरपंचों ने मुझे बताया कि ऐसा करने के बाद उनके अगले प्राक्कलन महीनों तक अटके रहे। मेरे पास इसका कोई साफ़ इलाज नहीं है। बस इतना कह सकता हूँ कि अटका प्राक्कलन देर देता है, ग़लत नाप वसूली देता है।

सीकर वाले सरपंच अब हर काम पर अपना फ़ीता ले जाते हैं। पंद्रह मीटर का, पीले कवर वाला, जिस पर किसी सीमेंट कंपनी का नाम छपा है। उन्होंने मुझे दिखाते हुए कहा था, 'चौधरी जी, ये ₹180 का है। बाक़ी चौवालीस हज़ार मैंने भरे।'

eGramSwaraj और PFMS: डिजिटल दस्तख़त का मतलब है डिजिटल जवाबदेही

काग़ज़ के रजिस्टर में कम से कम इतनी सुविधा है कि आप पन्ना देख सकते हैं, स्याही पहचान सकते हैं, और चाहें तो दस्तख़त करने से पहले रुक सकते हैं। पोर्टल पर यह सुविधा नहीं होती। वहाँ एक छोटा-सा USB टोकन होता है, यानी आपका डिजिटल सिग्नेचर (DSC), और एक PIN। टोकन लगा, PIN डला, बटन दबा, और पैसा PFMS के रास्ते सीधे किसी के बैंक खाते में। न चेक, न बैंक की खिड़की, न कोई बाबू जो पूछे कि यह भुगतान किसलिए है।

ज़्यादातर राज्यों में eGramSwaraj पर भुगतान दो क़दम में होता है। सचिव 'मेकर' बनकर वाउचर तैयार करता है, और सरपंच 'चेकर' बनकर उसे अपने DSC से मंज़ूर करता है। कई राज्यों में दोनों के DSC लगते हैं; व्यवस्था आपके राज्य के आदेश से तय होगी। पर एक बात हर जगह एक जैसी है: **पोर्टल सिर्फ़ यह दर्ज करता है कि टोकन किसका था। यह नहीं कि उँगली किसकी थी।**

2022 में प्रतापगढ़ ज़िले (राजस्थान) की एक पंचायत में यही हुआ। सरपंच ने अपना टोकन सचिव की दराज़ में रख छोड़ा था, क्योंकि 'बार-बार पंचायत भवन कौन आए'। PIN एक पीली पर्ची पर लिखकर टोकन के ढक्कन पर ही चिपका दिया गया था। मार्च के आख़िरी हफ़्ते में सोलर लाइटों के नाम पर एक फ़र्म को ₹86,500 का भुगतान हो गया। लाइटें कभी लगी ही नहीं। जाँच में सरपंच बोले, 'साहब, मैंने तो बटन तक नहीं दबाया।' जाँच अधिकारी ने पोर्टल का लॉग सामने रखा: उनका DSC, रात 11 बजकर 42 मिनट। 'तो फिर आपका टोकन रात पौने बारह बजे क्या कर रहा था?'

उस सवाल का कोई जवाब नहीं था। मैं ईमानदारी से कहूँ तो मुझे आज भी पक्का नहीं पता कि बटन सचिव ने दबाया या किसी और ने। जाँच भी यह तय नहीं कर पाई। वसूली का नोटिस फिर भी सरपंच के नाम आया।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 5 डिजिटल सिग्नेचर को हाथ के दस्तख़त के बराबर क़ानूनी मान्यता देती है। यानी DSC से मंज़ूर हर भुगतान वैसा ही है जैसे आपने कैश बुक और चेक पर ख़ुद दस्तख़त किए हों। टोकन किसे सौंपा जा सकता है और भुगतान में कितने हस्ताक्षर लगेंगे, यह आपके राज्य के पंचायती राज विभाग के आदेश देखिए।*

eGramSwaraj पर तीन तरह की प्रविष्टियाँ होती हैं: योजना (कौन-सा काम, कितनी राशि), प्रगति (काम कितना हुआ, जियो-टैग फ़ोटो के साथ) और भुगतान। ऑडिटर इन तीनों को आपस में मिलाता है। अगर प्रगति में नाली 40 प्रतिशत बनी है और भुगतान 90 प्रतिशत का हो चुका है, तो वह फ़र्क़ स्क्रीन पर लाल नहीं चमकता, पर ऑडिट रिपोर्ट में ज़रूर छपता है।

टोकन के साथ ये पाँच आदतें बनाइए:

1. टोकन हमेशा आपके पास रहे। घर की चाबियों के साथ, सचिव की दराज़ में कभी नहीं।
2. PIN कहीं लिखा न हो, और पहली बार मिलते ही बदल दिया जाए।
3. पोर्टल से जुड़ा मोबाइल नंबर आपका अपना हो, बेटे या सचिव का नहीं, ताकि हर OTP आपके फ़ोन पर आए।
4. मंज़ूरी से पहले स्क्रीन पर पाने वाले का नाम और खाता संख्या बिल से मिलाइए। एक अंक का फ़र्क़ भी पैसा किसी और के खाते में भेज देता है।
5. हर महीने भुगतान की रिपोर्ट डाउनलोड कीजिए और कैश बुक के सामने रखकर पंक्ति-दर-पंक्ति मिलाइए।

प्रतापगढ़ वाले सरपंच से मैं पिछले साल एक प्रशिक्षण में फिर मिला। उन्होंने कुर्ते की जेब से चाबियों का गुच्छा निकाला। उसमें घर की, खेत के कोठे की और मोटरसाइकिल की चाबी के बीच एक काला टोकन लाल धागे से बँधा था।

ऑडिट का सामना: आपत्ति आने पर काग़ज़ बोलें

ऑडिट रिपोर्ट जब पहली बार हाथ में आती है तो ज़्यादातर सरपंचों का पहला काम होता है आपत्तियों की कुल राशि देखना। फिर घबराहट। 2023 में झालावाड़ ज़िले के एक सरपंच ने मुझे रात साढ़े नौ बजे फ़ोन किया। उनकी आवाज़ काँप रही थी: 'चौधरी जी, ₹3,20,000 की आपत्ति है। अब तो रिकवरी आएगी।' मैंने उनसे रिपोर्ट की फ़ोटो भेजने को कहा। तेरह पैरा थे। उनमें से नौ ऐसे थे जिनका जवाब एक काग़ज़ नत्थी कर देने से हो जाता।

हर आपत्ति वसूली नहीं होती। ऑडिट पैरा मोटे तौर पर दो तरह के होते हैं। कुछ प्रक्रिया की चूक बताते हैं: बिल पर पाने वाले के दस्तख़त नहीं, स्टॉक रजिस्टर में सीमेंट की प्रविष्टि नहीं, उपयोगिता प्रमाणपत्र देर से गया। कुछ सीधे पैसे पर सवाल उठाते हैं: भुगतान माप से ज़्यादा, काम मौक़े पर नहीं मिला, बँधे अनुदान का पैसा खुले काम पर लगा। पहली तरह की आपत्तियाँ सही दस्तावेज़ से बंद हो जाती हैं। दूसरी तरह की आपत्तियों में दस्तावेज़ के साथ तर्क भी चाहिए, और कभी-कभी वह तर्क होता ही नहीं।

झालावाड़ वाले सरपंच ने अगले तीन दिन सचिव के साथ पंचायत भवन की अलमारी खोलकर बिताए। हैंडपंप मरम्मत के ₹48,000 के बिल एक अलग फ़ाइल में मिले, जिस पर किसी ने 'पुराना' लिख दिया था। ट्यूबवेल की मोटर का जियो-टैग फ़ोटो सचिव के पुराने फ़ोन की गैलरी में था। तीन महीने बाद जब अगली रिपोर्ट आई, तेरह में से दस पैरा बंद थे।

जवाब लिखने का तरीक़ा भी उतना ही मायने रखता है जितना दस्तावेज़:

1. हर पैरा का जवाब अलग पन्ने पर, पैरा संख्या के साथ। 'सभी आपत्तियों के संबंध में निवेदन है' जैसा एक गोल-मोल पत्र किसी काम का नहीं।

2. जवाब में सिर्फ़ यह मत लिखिए कि 'बिल उपलब्ध है'। लिखिए: वाउचर संख्या 47, दिनांक 12.08.2022, कैश बुक पृष्ठ 63, प्रति संलग्न।
3. मूल दस्तावेज़ कभी मत भेजिए। प्रमाणित प्रति भेजिए और मूल अलमारी में रखिए।
4. जहाँ आपके राज्य में AuditOnline पोर्टल पर जवाब देना है, वहाँ अपलोड के बाद पावती का स्क्रीनशॉट और प्रिंट दोनों रखिए।
5. जिस आपत्ति का सही जवाब आपके पास नहीं है, उस पर झूठा काग़ज़ मत बनाइए। लिखिए कि मामला जाँच में है, या ग़लती मानकर सुधार का रास्ता पूछिए।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *ऑडिट आपत्ति का जवाब कितने दिनों में देना है, किस अधिकारी को देना है, और जवाब न देने पर वसूली की प्रक्रिया कब शुरू होती है, यह हर राज्य के पंचायती राज अधिनियम और स्थानीय निधि अंकेक्षण के नियमों में अलग-अलग लिखा है। किसी दूसरे राज्य के सरपंच से सुनी हुई समय-सीमा पर भरोसा मत कीजिए। अपने ज़िले के अंकेक्षण कार्यालय से लिखित में पूछ लीजिए।*

पाँचवें बिंदु पर मेरी राय समय के साथ बदली है। पहले मैं सरपंचों को सलाह देता था कि हर पैरा पर लड़िए, कुछ न कुछ जवाब ज़रूर दीजिए। अब मुझे लगता है कि एक बनावटी जवाब उस आपत्ति से कहीं ज़्यादा ख़तरनाक है जिसे आपने ईमानदारी से माना। बनावटी जवाब अगले ऑडिट में पकड़ा जाता है, और तब सवाल चूक का नहीं, नीयत का बन जाता है। फिर भी मुझे पक्का नहीं कि हर ज़िले का ऑडिटर ग़लती मानने वाले सरपंच से नरमी बरतेगा। कुछ नहीं बरतते।

झालावाड़ वाले तीन पैरा अब भी खुले हैं। उनमें से एक 2019 की एक पुलिया का है, जो उनके कार्यकाल से पहले बनी थी। चार्ज-सूची में उसका ज़िक्र नहीं था। पिछली बार मिले तो उन्होंने अपनी फ़ाइल खोलकर दिखाई। पहले पन्ने पर लाल स्याही से लिखा था: 'पैरा 7, किसका जवाब दूँ?'

उपयोगिता प्रमाणपत्र: एक काग़ज़ जिसके बिना अगली किस्त नहीं आती

उपयोगिता प्रमाणपत्र (Utilisation Certificate, जिसे दफ़्तरों में सब 'UC' कहते हैं) देखने में एक पन्ने का साधारण फ़ॉर्म है। उसमें चार बातें लिखी जाती हैं: पिछली किस्त में कितना पैसा आया, उसमें से कितना किस काम पर ख़र्च हुआ, कितना बचा, और जो ख़र्च हुआ वह उसी मद में हुआ जिसके लिए पैसा मिला था। बस। पर यही पन्ना तय करता है कि अगली किस्त आपके खाते में आएगी या ज़िले की किसी फ़ाइल में अटकी रहेगी।

2022 में सीहोर ज़िले की एक पंचायत की सरपंच मंजू बाई ने मुझे बताया कि उनकी पंचायत के वित्त आयोग के लगभग ₹14 लाख आठ महीने से नहीं आए थे। ब्लॉक से हर बार एक ही जवाब मिलता: 'UC पेंडिंग है।' मंजू बाई ने तो कोई UC रोका ही नहीं था। खोजबीन हुई तो

पता चला कि पिछले कार्यकाल की एक किस्त का प्रमाणपत्र कभी गया ही नहीं था, क्योंकि उसमें से ₹2,30,000 का हिसाब कैश बुक में था, पर eGramSwaraj पर नहीं चढ़ा था। दोनों आँकड़े मेल नहीं खाते थे, तो सचिव ने प्रमाणपत्र पर दस्तख़त करवाना टाल दिया। टालते-टालते चुनाव आ गया। व्यवस्था पैसे को पंचायत के नाम पर रोकती है, किसी व्यक्ति के नाम पर नहीं। सज़ा नए सरपंच को मिली।

UC तभी सही बनता है जब कैश बुक, बैंक पासबुक और पोर्टल, तीनों एक ही रक़म बोलें। अगर इनमें से एक भी अलग बोलता है, तो प्रमाणपत्र या तो रुकेगा, या उससे भी बुरा, ग़लत आँकड़ों के साथ चला जाएगा और अगले ऑडिट में पैरा बनकर लौटेगा।

UC भेजने से पहले यह जाँच ख़ुद कीजिए, सचिव के भरोसे नहीं:

1. उस किस्त की प्राप्ति की तारीख़ और राशि बैंक पासबुक से मिलाइए।
2. हर ख़र्च के सामने वाउचर संख्या और कैश बुक का पृष्ठ लिखवाइए।
3. बँधे अनुदान का पैसा पेयजल और स्वच्छता के कामों पर ही गया है, यह अलग से जोड़कर देखिए। खुले अनुदान की रक़म उसमें घुली न हो।
4. बची हुई राशि (शेष) पासबुक के आख़िरी बैलेंस से मिलनी चाहिए। ब्याज भी जोड़िए; ब्याज की रक़म भी उसी अनुदान का हिस्सा मानी जाती है।
5. प्रमाणपत्र की एक प्रति, ब्लॉक की पावती के साथ, अपनी चार्ज-फ़ाइल में रखिए।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *केंद्रीय वित्त आयोग के अनुदान की अगली किस्त जारी करने की शर्तें, जैसे पिछली किस्तों के उपयोगिता प्रमाणपत्र और लेखों का ऑनलाइन उपलब्ध होना, केंद्र के दिशानिर्देशों में तय होती हैं। पर UC किस प्रारूप में, किस अधिकारी के पास और कितने दिनों में जमा होगा, यह आपके राज्य का पंचायती राज विभाग तय करता है। मध्य प्रदेश का नियम राजस्थान पर लागू मत मानिए।*

मंजू बाई का मामला सुलझने में चार महीने और लगे। पुराने ₹2,30,000 के वाउचर ढूँढे गए, पोर्टल पर देर से प्रविष्टि की अनुमति के लिए ज़िले को लिखा गया, और आख़िर में प्रमाणपत्र गया। मुझे सच में नहीं पता कि वह देर से प्रविष्टि नियम के हिसाब से ठीक थी या किसी अधिकारी की मेहरबानी से हुई। काग़ज़ों में दोनों बातें एक जैसी दिखती हैं।

मार्च 2023 में पैसा आया। ₹14 लाख, एक साथ। उसी हफ़्ते सचिव एक छपी हुई सूची लेकर मंजू बाई के पास पहुँचे: तीन सीसी सड़कें, दो नालियाँ, एक चबूतरा। सब पर रक़म पहले से लिखी थी।

'बाई सा, बस यहाँ दस्तख़त कर दीजिए, योजना तैयार है।'

मंजू बाई ने सूची पलटी। फिर पूछा, 'ये तैयार किसने की?'

सचिव कुछ देर चुप रहे। सूची में न आँगनवाड़ी का नाम था, न स्कूल का, न उस पश्चिमी टोले का जहाँ हर गर्मी में टैंकर जाता था।

अध्याय 6

योजना कैसे बनती है

गाँव का नक्शा ज़मीन पर: रंगोली, चॉक और सामाजिक मानचित्रण

चूने का आधा कट्टा, चार रंग की रंगोली और नीम की एक सूखी टहनी। अक्टूबर 2023 में सीहोर ज़िले की उस पंचायत में मंजू बाई की योजना इसी सामान से शुरू हुई। कुल ख़र्च ₹110 आया था, और उसका वाउचर आज भी फ़ाइल में लगा है, क्योंकि मंजू बाई अब हर पर्ची लगाती हैं।

मैं उस सुबह स्कूल के सामने वाले मैदान में था। सच कहूँ तो मैं उम्मीद के साथ नहीं गया था। बरसों तक मैं सामाजिक मानचित्रण को प्रशिक्षण-पुस्तिकाओं की रस्म मानता रहा, जिसकी फ़ोटो खींचकर पोर्टल पर चढ़ा दी जाती है और फिर कोई उसे नहीं देखता। मेरी यह राय उसी मैदान पर बदली, हालाँकि पूरी तरह नहीं। आज भी मैंने ऐसे नक्शे देखे हैं जो सचिव ने अकेले, कमरे में बैठकर काग़ज़ पर बना दिए। उनसे कुछ नहीं निकलता।

शुरुआत चूने से हुई। आठवीं के दो लड़कों ने टहनी से एक लंबी लकीर खींची और बोले, 'ये पक्की सड़क।' फिर तालाब बना, फिर मंदिर, फिर पंचायत भवन। यहाँ तक वही नक्शा था जो सचिव की सूची में था। फिर एक बुज़ुर्ग औरत ने पीली रंगोली उठाई और सड़क से बहुत दूर, मैदान के लगभग किनारे पर छोटे-छोटे तेईस घर बनाए।

'इतनी दूर क्यों, अम्मा?' किसी लड़के ने पूछा।

'क्योंकि हम इतनी ही दूर हैं।'

वह पश्चिमी टोला था। वही जहाँ हर गर्मी में टैंकर जाता था। ज़मीन पर बने नक्शे में पहली बार दिखा कि उस टोले और सबसे नज़दीकी चालू हैंडपंप के बीच एक नाला पड़ता है, जिसे बरसात में पार करना मुश्किल होता है। सचिव की छपी सूची में यह टोला कहीं नहीं था। काग़ज़ पर कोई झूठ नहीं था। बस वह टोला काग़ज़ तक पहुँचा ही नहीं था।

फिर रंगों का खेल शुरू हुआ, और यहीं इस अभ्यास की असली ताक़त है। लाल रंगोली उन घरों पर डाली गई जहाँ कोई विधवा या बुज़ुर्ग अकेला रहता था। हरी उन घरों पर जहाँ पाँच साल से छोटा बच्चा था। नीली उन पर जहाँ से कोई लड़की आठवीं के बाद स्कूल छोड़ चुकी थी। आधे

घंटे में मैदान बोलने लगा। नीले निशान ज़्यादातर पश्चिमी टोले में थे। आँगनवाड़ी सड़क के उस पार थी, जहाँ से ट्रक निकलते हैं, और हरे निशान वाले ग्यारह घर उसी पार नहीं, इस पार थे।

किसी ने कुछ समझाया नहीं। औरतें खड़ी होकर देखती रहीं। एक ने धीरे से कहा, 'बच्ची को इतनी दूर कौन भेजेगा।'

सामाजिक मानचित्रण में गाँव अपनी ज़मीन पर अपनी ज़िंदगी बनाता है, और जो चीज़ें बैठक में कोई बोलता नहीं, वे रंग में दिख जाती हैं। काग़ज़ के नक्शे पर पेन एक आदमी के हाथ में रहता है। ज़मीन पर हर कोई झुककर बदल सकता है। यही फ़र्क़ है।

अगर आप यह अभ्यास करवाना चाहते हैं, तो कुछ बातें मैंने ग़लतियों से सीखी हैं:

1. जगह खुली और सबकी हो। पंचायत भवन का बरामदा नहीं, स्कूल का मैदान या चौपाल। दलित बस्ती के लोग जिस आँगन में आने से हिचकते हैं, वहाँ नक्शा अधूरा रहेगा।
2. शुरुआत बच्चों से करवाइए। सड़क और तालाब वे जल्दी बना देते हैं, और बड़ों की झिझक टूटती है।
3. रंगों का मतलब पहले तय करके बड़े अक्षरों में एक तख़्ती पर लिख दीजिए।
4. नक्शा मिटने से पहले ऊपर से तीन-चार फ़ोटो लीजिए, और एक वार्ड पंच से उसे चार्ट-पेपर पर उतरवाइए। बारिश किसी का इंतज़ार नहीं करती।
5. हर रंग के निशान गिनकर रजिस्टर में लिखिए: कितने घर, किस टोले में। यही आँकड़े आगे ज़रूरतों के सर्वे का आधार बनते हैं।

उस दिन शाम चार बजे तक नक्शा पूरा हुआ। मंजू बाई देर तक उसके किनारे खड़ी रहीं, पीले घरों के पास। सचिव भी आए थे। उन्होंने फ़ोटो खींची, फिर अपनी छपी सूची जेब से निकाली, उसे देखा, और बिना कुछ बोले वापस रख ली।

ज़रूरत और माँग का फ़र्क़: जो सबसे ज़ोर से बोलता है, उसकी सड़क सबसे पहले नहीं

नक्शे के तीन दिन बाद वार्ड सभा हुई, और वहाँ पहला हाथ गोपाल सिंह का उठा। गोपाल सिंह के पास चालीस बीघा ज़मीन है, एक ट्रैक्टर है, और उनकी आवाज़ बिना माइक के पंचायत भवन की पिछली दीवार तक पहुँचती है। उनकी माँग साफ़ थी: मुख्य सड़क से उनके खेत तक 420 मीटर की सीसी सड़क। सचिव की छपी सूची में यह काम पहले से था, अनुमानित लागत ₹6,80,000 के साथ।

'बरसात में ट्रैक्टर धँस जाता है, बाई सा। पूरा गाँव जानता है।'

पूरा गाँव जानता था। यह भी सच था। मैंने बीस साल में शायद ही कोई ऐसी माँग सुनी हो जो पूरी तरह झूठी हो। दिक़्क़त यहीं है। **माँग अक्सर सच्ची होती है, पर हर सच्ची माँग ज़रूरत**

नहीं होती। माँग वह है जो कोई बोलकर रखता है। ज़रूरत वह है जो गिनकर निकलती है: कितने घर, कितने लोग, किस नुक़सान से।

उस सड़क से कितने परिवारों को सीधा फ़ायदा होता? मंजू बाई ने यही पूछा। जवाब आया: चार। गोपाल सिंह के अलावा तीन और खेत उस रास्ते पर थे। उसी बैठक में चार्ट-पेपर पर उतरा नक्शा दीवार पर टँगा था, और उस पर पश्चिमी टोले के तेईस पीले घर थे, नाले के उस पार।

यहाँ मैं एक बात ईमानदारी से कहूँ। गोपाल सिंह की सड़क बेकार नहीं थी। खेत तक पक्का रास्ता फ़सल की ढुलाई सस्ती करता है, और खेती-आजीविका GPDP के नौ विषयों में बाक़ायदा आती है। पर ₹6,80,000 में से कितना हिस्सा चार परिवारों पर जाए और कितना तेईस पर, यह फ़ैसला आवाज़ के ज़ोर से नहीं होना चाहिए। होता यही है।

मैंने 2019 में धार ज़िले की एक पंचायत की योजना पढ़ी थी जिसमें बारह कामों में से नौ सीसी सड़कें थीं, और उनमें से छह उन गलियों में थीं जहाँ वार्ड पंच या उनके रिश्तेदार रहते थे। स्कूल का शौचालय चार साल से 'अगले साल' की सूची में था। किसी ने कोई नियम नहीं तोड़ा था। हर सड़क ग्राम सभा से पास हुई थी। बस सभा में वही बोले थे जो हमेशा बोलते हैं।

मंजू बाई ने उस दिन एक सीधा तरीक़ा अपनाया, जो मैं अब हर प्रशिक्षण में बताता हूँ। हर प्रस्तावित काम के सामने चार सवाल लिखे गए:

1. कितने परिवारों को सीधा फ़ायदा? (नक्शे और रजिस्टर की गिनती से, अंदाज़े से नहीं।)
2. क्या फ़ायदा पाने वालों में लाल, हरे या नीले निशान वाले घर हैं, यानी अकेले बुज़ुर्ग, छोटे बच्चे, स्कूल छोड़ चुकी लड़कियाँ?
3. यह काम न हुआ तो नुक़सान क्या है: असुविधा, या बीमारी, पढ़ाई छूटना, पैसे की हानि?
4. क्या किसी और योजना से यह काम हो सकता है? (खेत की सड़क मनरेगा में ली जा सकती है, जिससे पंचायत का खुला अनुदान बचता है।)

हर सवाल पर एक से तीन तक अंक। जोड़ ब्लैकबोर्ड पर, सबके सामने। पश्चिमी टोले तक नाले पर पुलिया और एक नया हैंडपंप 11 अंक पर आए। गोपाल सिंह की सड़क 6 पर। लड़कियों के लिए आँगनवाड़ी के पास ज़ेब्रा क्रॉसिंग और स्पीड-ब्रेकर 9 पर।

मुझे नहीं पता कि यह अंक-पद्धति हर गाँव में चलेगी। अंक देने वाले भी इंसान हैं, और जिस गाँव में बैठक पर किसी एक घराने का क़ब्ज़ा है, वहाँ ब्लैकबोर्ड पर भी वही लिखा जाएगा जो वह चाहता है। पर इतना मैंने देखा है कि जब हिसाब सबकी आँखों के सामने लिखा जाता है, तो ज़ोर से बोलने वाले को भी अपनी बात गिनती में रखनी पड़ती है, सिर्फ़ आवाज़ में नहीं।

गोपाल सिंह ने उस दिन बहस की। फिर पूछा कि मनरेगा वाला रास्ता कब तक बनेगा। मंजू बाई ने कहा, 'अगले साल के लेबर बजट में डाल देते हैं, आप मज़दूरों की सूची दे दीजिए।'

वे चुप रहे। फिर उठकर दीवार तक गए और पीले घरों के बीच से गुज़रती नीली लकीर को देर तक देखते रहे। मुझे लगा, शायद पहली बार उन्हें पता चला था कि नाला उनके खेत से कितनी दूर बहता है।

नौ विषय, एक गाँव: SDG स्थानीयकरण का व्यावहारिक अर्थ

सतत विकास लक्ष्य (SDG) संयुक्त राष्ट्र के 17 लक्ष्य हैं, जिन पर भारत ने 2015 में दस्तख़त किए। सरपंच के लिए 17 लक्ष्य बहुत दूर की बात हैं, इसलिए पंचायती राज मंत्रालय ने उन्हें गाँव की भाषा में नौ विषयों में समेट दिया। 2022 के बाद से GPDP इन्हीं के इर्द-गिर्द बनती है, और पंचायत विकास सूचकांक भी इन्हीं पर आपकी पंचायत को नापता है। सूची यह है:

1. ग़रीबी-मुक्त और बेहतर आजीविका वाला गाँव
2. स्वस्थ गाँव
3. बाल-हितैषी गाँव
4. जल-पर्याप्त गाँव
5. स्वच्छ और हरित गाँव
6. आत्मनिर्भर बुनियादी ढाँचे वाला गाँव
7. सामाजिक रूप से सुरक्षित और न्यायपूर्ण गाँव
8. सुशासन वाला गाँव
9. महिला-हितैषी गाँव

काग़ज़ पर यह सूची सुंदर लगती है। व्यवहार में ज़्यादातर पंचायतें इसे एक ड्रॉपडाउन मेनू की तरह बरतती हैं। पोर्टल पर हर काम के सामने एक विषय चुनना होता है, तो सचिव चुन देते हैं। 2023 में विदिशा ज़िले की एक पंचायत की योजना मेरे सामने आई जिसमें चौदह कामों में से ग्यारह 'आत्मनिर्भर बुनियादी ढाँचा' के खाने में थे, और बाक़ी तीन 'स्वच्छ और हरित' में, क्योंकि वे नालियाँ थीं। नौ में से सात विषयों पर एक रुपया नहीं। पोर्टल ने कोई आपत्ति नहीं की। पोर्टल को इससे कोई मतलब नहीं होता कि गाँव में बच्चे हैं या नहीं।

नौ विषयों का असली काम लेबल लगाना नहीं, यह दिखाना है कि आपकी योजना में क्या छूट गया। इसे उल्टा करके इस्तेमाल कीजिए। पहले काम चुनिए, फिर हर विषय के सामने देखिए कि उस खाने में कुछ है या नहीं। ख़ाली खाना अपने आप एक सवाल है।

मंजू बाई ने वार्ड सभा के अगले दिन यही किया। ब्लैकबोर्ड पर बचे कामों के सामने उन्होंने विषय लिखवाए। पुलिया और हैंडपंप 'जल-पर्याप्त' और 'बुनियादी ढाँचा' दोनों में गए। ज़ेब्रा क्रॉसिंग और स्पीड-ब्रेकर 'बाल-हितैषी' में। मनरेगा वाला खेत का रास्ता 'आजीविका' में। फिर पंचायत भवन में बैठे लोगों ने देखा कि 'स्वस्थ गाँव' का खाना ख़ाली है, जबकि दीवार पर टँगे नक्शे में चौदह घरों पर लाल निशान थे: वे घर जहाँ आँगनवाड़ी के रजिस्टर में बच्चे कम वज़न वाले दर्ज थे।

'इसमें क्या डालें, बाई सा? अस्पताल तो पंचायत बना नहीं सकती,' एक वार्ड पंच बोले।

यह सवाल मैं लगभग हर प्रशिक्षण में सुनता हूँ, और इसके पीछे एक पक्की धारणा है कि पंचायत का काम वही है जिसमें सीमेंट लगे। 'स्वस्थ गाँव' के खाने में भरने के लिए अस्पताल नहीं

चाहिए। उस दिन जो काम आए, वे छोटे थे:

- आँगनवाड़ी में बच्चों का वज़न लेने की मशीन, जो आठ महीने से ख़राब पड़ी थी। मरम्मत ₹2,400।
- आँगनवाड़ी के पीछे की ख़ाली ज़मीन पर पोषण वाटिका, बाड़ और बीज समेत ₹9,000 के आसपास, खुले अनुदान से।
- हर महीने की ग्राम स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं पोषण दिवस बैठक में एक वार्ड पंच की बारी तय करना। लागत शून्य।

तीसरा काम योजना में डालने पर सचिव ने भौंहें चढ़ाईं: 'इसका बजट क्या लिखेंगे?' मंजू बाई ने कहा, 'शून्य लिखिए। योजना में बिना पैसे के काम नहीं आ सकते क्या?' आ सकते हैं। GPDP में ऐसे गतिविधि-आधारित काम दर्ज करने की जगह है, पर मैंने बहुत कम पंचायतें देखी हैं जो उसे भरती हैं।

एक और बात, जो अक्सर छूट जाती है। मंत्रालय चाहता है कि हर पंचायत इन नौ में से कम से कम एक विषय को अपना 'संकल्प' बनाए, यानी उस साल उस पर ख़ास ज़ोर। ज़्यादातर पंचायतें 'स्वच्छ और हरित' चुनती हैं, क्योंकि उसमें दिखाने लायक़ काम जल्दी होते हैं। मैं ईमानदारी से कहूँ तो मुझे पक्का नहीं पता कि यह संकल्प वाला प्रावधान ज़मीन पर कितना बदलता है। कई जगह मैंने इसे सिर्फ़ एक प्रस्ताव की पंक्ति बनते देखा है। पर जहाँ ग्राम सभा ख़ुद बहस करके संकल्प चुनती है, वहाँ अगले साल लोग पूछते ज़रूर हैं कि उस पर क्या हुआ।

मंजू बाई की पंचायत ने 'बाल-हितैषी गाँव' चुना। यह फ़ैसला उस शाम बैठक में नहीं हुआ। पंचायत भवन से निकलते समय उन्होंने देखा कि नक्शे वाले मैदान में कुछ बच्चे फिर इकट्ठा थे और चूने से मिटते हुए स्कूल के निशान के पास एक नया चौकोर बना रहे थे, जो पहले नक्शे में नहीं था।

बजट से जोड़ना: सपनों की सूची को पैसे की सीमा में बाँधना

अगली सुबह मंजू बाई स्कूल गईं और उन बच्चों को बुलवाया। चौकोर के बारे में पूछा तो सातवीं की एक लड़की ने बताया कि वह स्कूल की टंकी है। टंकी थी, पर उसमें पानी 2021 से नहीं आया था। आधी छुट्टी में लड़कियाँ पानी पीने घर जाती थीं, और उनमें से कई लौटती नहीं थीं। 'मैडम जी कहती हैं, घर से बोतल लाओ। बोतल कहाँ से लाएँ?' लड़की ने कहा। उस दिन की बात मंजू बाई ने एक पर्ची पर लिख ली। बाद में वही पर्ची योजना की फ़ाइल में सबसे ऊपर लगी मिली।

अब असली काम शुरू हुआ, जिसे ज़्यादातर पंचायतें सबसे पहले करती हैं और ग़लत तरीक़े से करती हैं। वार्ड सभाओं से आई सूची का जोड़ ₹41 लाख से ऊपर था। पंचायत के हाथ में इसका आधा भी नहीं था।

योजना का पहला अंक माँगों का जोड़ नहीं, आने वाले पैसे का अंदाज़ा है। इसे संसाधन-आवरण (resource envelope) कहते हैं, यानी अगले वित्त वर्ष में पंचायत के पास कुल कितना पैसा आने की उम्मीद है। मंजू बाई के सचिव ने पिछले दो साल की प्राप्तियाँ देखकर यह हिसाब बनाया:

1. पंद्रहवें वित्त आयोग का अनुमानित अनुदान: लगभग ₹18 लाख। इसमें बँधा हिस्सा (60 प्रतिशत) ₹10,80,000, केवल पेयजल और स्वच्छता के लिए, और खुला हिस्सा (40 प्रतिशत) ₹7,20,000।
2. राज्य वित्त आयोग की राशि: लगभग ₹3 लाख (राज्य हर साल अलग तय करता है, इसलिए यह अंक सबसे कच्चा था)।
3. अपनी आय, यानी गृह कर और तालाब की नीलामी: ₹46,000।
4. मनरेगा: पैसा पंचायत के खाते में नहीं आता, पर लेबर बजट में जो काम चढ़ते हैं, वे इसी योजना का हिस्सा माने जाते हैं।

अनुमान को ज़्यादा मत रखिए। सीहोर की इसी पंचायत के ₹14 लाख पिछली बार आठ महीने अटके रहे थे। जो पंचायत आने वाले हर रुपये को पहले ही ख़र्च मान लेती है, वह किस्त रुकते ही आधे-अधूरे कामों के बोझ में दब जाती है।

फिर सूची की छँटाई हुई। सबसे काम का नियम वही था जो बूँदी से लेकर बाराबंकी तक हर ऑडिट आपत्ति सिखाती है: **हर काम को पहले सही थैली में डालिए, फिर देखिए कि थैली में जगह है या नहीं।** स्कूल की टंकी तक पास के नलकूप से पाइप जोड़ने का प्राक्कलन ₹28,000 बना। पेयजल का काम था, इसलिए बँधे अनुदान से गया, और खुले अनुदान का एक रुपया नहीं लगा। पुलिया का आधा ख़र्च मनरेगा की मज़दूरी में चला गया। ज़ेब्रा क्रॉसिंग, स्पीड-ब्रेकर, वज़न मशीन और पोषण वाटिका खुले अनुदान से। गोपाल सिंह का खेत वाला रास्ता लेबर बजट में।

तब भी ₹9 लाख के काम बच गए: एक सामुदायिक भवन की चारदीवारी, दो सीसी सड़कें, श्मशान का टीन शेड। मंजू बाई ने इन्हें काटा नहीं। उन्हें एक अलग सूची में डाला, जिसे GPDP में 'शेल्फ़ ऑफ़ प्रोजेक्ट्स' कहते हैं, यानी स्वीकृत पर प्रतीक्षा में रखे काम। अगर बीच साल में कोई अतिरिक्त राशि आए, या कोई काम सस्ता निपटे, तो ग्राम सभा से दोबारा पूछे बिना इसी शेल्फ़ से अगला काम उठाया जा सकता है। मैंने देखा है कि शेल्फ़ होने से एक और फ़ायदा होता है। जिस वार्ड का काम इस साल नहीं आया, उसे लगता है कि वह सूची में है, कूड़ेदान में नहीं। झगड़ा आधा वहीं ख़त्म हो जाता है।

मुझे यह मानने में संकोच नहीं कि पहले मैं शेल्फ़ को सरकारी सजावट समझता था। रायसेन और विदिशा की कई योजनाओं में उसे लंबा होते और कभी न खुलते देखा था। मंजू बाई की पंचायत में वह अगस्त में खुली, जब एक पुराने काम की बचत ₹1,60,000 निकली।

2 अक्टूबर की ग्राम सभा में योजना पढ़ी गई। 212 लोग आए। सूची के तीसरे नंबर पर स्कूल की टंकी थी, बजट के खाने में ₹28,000 और विषय के खाने में 'बाल-हितैषी गाँव'। प्र-

स्ताव पास हुआ, कार्यवाही पर दस्तख़त हुए, योजना पोर्टल पर चढ़ गई।

दस दिन बाद ब्लॉक से JEN साहब आए। फ़ाइल पलटी, टंकी वाले पन्ने पर रुके और बोले, 'बाई सा, ये अट्ठाईस हज़ार किस रेट से निकाले? पाइप का साइज़ कहाँ लिखा है? नलकूप किसके नाम है?'

मंजू बाई ने सचिव की तरफ़ देखा। सचिव ने खिड़की की तरफ़।

अध्याय 7

काम ज़मीन पर

स्वीकृतियों की सीढ़ी

तीन सवाल, और तीनों का जवाब ग्राम सभा के पास नहीं था। हो भी नहीं सकता था। ग्राम सभा यह तय करती है कि **कौन-सा** काम होगा। काम **कैसे** होगा, किस दर पर, किस नाप से और किसकी ज़मीन पर, यह एक अलग सीढ़ी है, और उसके हर पायदान पर अलग आदमी का दस्तख़त लगता है। जो सरपंच योजना पास होने को काम शुरू होना समझ लेते हैं, वे इसी सीढ़ी पर गिरते हैं।

मंजू बाई की ₹28,000 वाली संख्या अंदाज़े से आई थी। सचिव ने पिछले साल किसी दूसरी पंचायत की टंकी का ख़र्च देखकर लिख दिया था। JEN ने उसी शाम राज्य की दर-अनुसूची (Schedule of Rates, यानी हर सामान और मज़दूरी की सरकारी तय दर) खोली, पाइप की लंबाई नापी, टोंटियों की गिनती की। नया प्राक्कलन ₹31,400 का बना। फिर नलकूप का सवाल। पटवारी के रिकॉर्ड में स्कूल के पीछे की वह ज़मीन अब भी रामप्रसाद नाम के एक किसान के नाम थी, जिनके पिता ने 1987 में ज़बानी दान दी थी। ज़बानी दान पर सरकारी पैसा नहीं लगता। रामप्रसाद से लिखित सहमति-पत्र लेने में ग्यारह दिन गए।

यह सीढ़ी ज़्यादातर राज्यों में इसी क्रम में चढ़ी जाती है:

1. **प्राक्कलन (Estimate):** JEN या तकनीकी सहायक दर-अनुसूची से बनाते हैं, नक्शे और नाप के साथ। अंदाज़े वाली संख्या यहाँ नहीं चलती।
2. **प्रशासनिक स्वीकृति:** पंचायत की बैठक का प्रस्ताव, जो कहता है कि यह काम GPDP में है और इस मद से होगा। एक तय सीमा से ऊपर यह स्वीकृति पंचायत समिति या ज़िला परिषद से लेनी पड़ती है।
3. **तकनीकी स्वीकृति:** राशि के हिसाब से JEN, AEN या अधिशासी अभियंता देते हैं। यह प्रमाणित करती है कि डिज़ाइन और दरें सही हैं।

4. **वित्तीय स्वीकृति:** कुछ राज्यों में अलग से, कुछ में प्रशासनिक के साथ जुड़ी हुई। पैसा खाते में है, यह इसका काग़ज़ी सबूत है।
5. **कार्यादेश (Work Order):** तारीख़, पूरा होने की समय-सीमा, कार्यकारी एजेंसी का नाम और मेट या ठेकेदार की ज़िम्मेदारी के साथ।

हर पायदान की सीमा राज्य का अधिनियम और उसके नियम तय करते हैं, और ये सीमाएँ बदलती रहती हैं। राजस्थान में मैंने एक ही कार्यकाल में तकनीकी स्वीकृति की सीमा दो बार बदलते देखी है। सच कहूँ तो 2023 में सीहोर में JEN की स्वीकृति-सीमा ठीक कितनी थी, मुझे पक्का नहीं पता। मंजू बाई को भी नहीं पता था, और उन्होंने वही किया जो आपको करना चाहिए: ब्लॉक से वह परिपत्र लिखित में माँगा। उसकी फ़ोटोकॉपी आज भी उनकी फ़ाइल के पहले पन्ने पर लगी है।

सबसे आम चूक क्रम उलटने की होती है। गुना ज़िले की एक पंचायत में 2020 में सरपंच ने बरसात से पहले नाली का काम शुरू करवा दिया, यह सोचकर कि तकनीकी स्वीकृति पीछे से आ जाएगी। आई भी। पर उस पर तारीख़ काम शुरू होने के सोलह दिन बाद की थी, और माप पुस्तिका की पहली प्रविष्टि उससे पहले की। ऑडिटर ने सिर्फ़ दो तारीख़ें मिलाईं। ₹74,000 का पूरा भुगतान 'बिना स्वीकृति का ख़र्च' बनकर पैरा में चला गया, जबकि नाली ठीक बनी थी और आज भी पानी बहा रही है।

मंजू बाई की टंकी का कार्यादेश 4 दिसंबर को जारी हुआ, प्रस्ताव पास होने के ठीक दो महीने बाद। उस दिन वे स्कूल गईं। पुरानी टंकी पर जंग लगा ताला लटका था। हेडमास्टर ने कहा, 'बाई सा, चाबी तो 2021 वाले मास्टर जी ले गए थे, तबादले में।'

ख़रीद के नियम: कोटेशन, टेंडर और रिश्तेदार की दुकान

ताला तुड़वाने में दस मिनट लगे। असली सवाल उसके बाद आया: पाइप, टोंटियाँ, नई टंकी और फ़िटिंग का सामान ख़रीदा कहाँ से जाए। प्राक्कलन में सामग्री का हिस्सा ₹19,600 का था। सचिव ने बिना सोचे कहा, 'बाई सा, आष्टा रोड पे वर्मा जी की दुकान है, वहीं से हमेशा आता है।' 'हमेशा' शब्द सुनकर मेरे कान खड़े हो जाते हैं। ऑडिट रिपोर्टों में सबसे ज़्यादा पैरा इसी एक शब्द से निकलते हैं।

सरकारी ख़रीद की बनावट लगभग हर राज्य में एक जैसी है, बस सीमाएँ अलग हैं:

1. **छोटी ख़रीद:** एक तय राशि तक सीधे बाज़ार से, पर पक्के बिल और GST नंबर के साथ।
2. **कोटेशन:** उससे ऊपर कम से कम तीन अलग दुकानों से सीलबंद दरें, तय तारीख़ पर पंचायत की बैठक में खोली गईं, और सबसे कम दर वाले को आदेश।
3. **टेंडर:** और ऊपर खुली निविदा, अख़बार या ई-प्रोक्योरमेंट पोर्टल पर।

4. **GeM:** केंद्र सरकार का ऑनलाइन बाज़ार (Government e-Marketplace)। कई राज्यों ने कुछ सामानों के लिए इसे अनिवार्य किया है, कुछ ने नहीं।

ये सीमाएँ कितनी हैं, यह मैं यहाँ नहीं लिखूँगा, और जानबूझकर नहीं लिखूँगा। जो संख्या मैं आज लिखूँ, वह आपके राज्य में ग़लत हो सकती है और अगले साल मेरे अपने राज्य में भी। अपने ज़िले के वित्तीय नियम या भंडार-क्रय नियम की ताज़ा प्रति ब्लॉक से लीजिए और उसकी सीमा वाली पंक्ति पर पीली स्याही फेर दीजिए।

कच्ची फ़ाइल

दौसा ज़िले की एक पंचायत, 2019। सामुदायिक भवन के दरवाज़े, खिड़कियाँ और ग्रिल ₹1,26,000 में ख़रीदे गए। फ़ाइल में तीन कोटेशन लगे थे, तीनों एक ही गली की दुकानों के। ऑडिटर ने पहले लेटरहेड देखे, फिर लिखावट। तीनों पर दरें एक ही नीली स्याही में, एक ही हाथ से भरी गई थीं, और '7' का अंक तीनों में यूरोपीय ढंग से बीच में कटा हुआ था। सबसे सस्ता कोटेशन सरपंच के साले की दुकान का निकला। सरपंच ने मुझसे कहा, 'चौधरी जी, माल तो सही दिया उसने, बाज़ार से सस्ता।' शायद दिया भी हो। पर राजस्थान के अधिनियम में, और कई दूसरे राज्यों में भी, पंचायत के ठेके या आपूर्ति में सरपंच का प्रत्यक्ष या परोक्ष हित उसे पद से हटाने का आधार बन सकता है। वसूली नोटिस आया, और उसके साथ अयोग्यता की जाँच। जाँच दो साल चली।

दूसरी आम चाल का नाम गाँव में 'बिल तोड़ना' है। ₹90,000 का सामान चाहिए और कोटेशन की सीमा उससे नीचे है, तो तीन हफ़्तों में ₹30,000 के तीन बिल बना दिए। ऑडिटर इसे तुरंत पकड़ते हैं, क्योंकि एक ही काम, एक ही दुकान और लगातार तारीख़ें स्टॉक रजिस्टर में एक लाइन बनाकर खड़ी हो जाती हैं।

रिश्तेदार की दुकान से ख़रीद हर हाल में अपराध नहीं है, पर उसे साफ़ रखने का एक ही तरीक़ा है: हित की लिखित घोषणा। बैठक की कार्यवाही में दर्ज कीजिए कि यह दुकान आपके किस रिश्तेदार की है, और उस प्रस्ताव पर आप वोट नहीं करेंगे। उपसरपंच बैठक की अध्यक्षता करें। काग़ज़ पर आपका न होना ही आपकी रक्षा है।

मंजू बाई ने तीन कोटेशन मँगवाए: वर्मा जी, आष्टा की एक दूसरी दुकान, और सीहोर शहर की एक तीसरी। साथ में GeM पर वही पाइप देखा गया। 15 दिसंबर की बैठक में लिफ़ाफ़े खुले। सबसे कम दर ₹17,850 की थी, वर्मा जी की नहीं। GeM पर वही पाइप, उसी साइज़ का, ₹21,300 का था, ढुलाई अलग। सचिव ने स्क्रीन की ओर इशारा किया और धीरे से बोले, 'बाई सा, सरकार का अपना बाज़ार सबसे महँगा है।'

मनरेगा: मस्टर रोल पर एक फ़र्ज़ी नाम और उसकी क़ीमत

टंकी का सामान आष्टा की दूसरी दुकान से आया। पर उसी महीने पंचायत में एक और काम खुला, जिसमें ख़रीद कम थी और जोखिम कहीं ज़्यादा: गोपाल सिंह की वह 420 मीटर की

सड़क, जो योजना में मनरेगा के लेबर बजट में गई थी। मनरेगा में पैसा दुकानदार को कम जाता है, मज़दूर को ज़्यादा। इसलिए यहाँ गड़बड़ी बिल में नहीं होती। वह हाज़िरी में होती है।

मनरेगा के काम की रीढ़ चार काग़ज़ हैं, और चारों एक-दूसरे से जुड़े हैं:

1. **जॉब कार्ड:** परिवार का पंजीकरण, जिस पर काम करने वाले वयस्कों के नाम और फ़ोटो होते हैं।
2. **काम की माँग:** लिखित या मौखिक आवेदन, जिसकी तारीख़ वाली रसीद मिलनी चाहिए।
3. **मस्टर रोल:** ब्लॉक से जारी, क्रमांक वाला हाज़िरी का पन्ना। मेट उस पर रोज़ हाज़िरी भरता है, और अब ज़्यादातर कामों पर NMMS ऐप से दिन में दो बार जियो-टैग फ़ोटो भी अपलोड होती है।
4. **मज़दूरी भुगतान:** माप के आधार पर, सीधे मज़दूर के खाते में।

इस ढाँचे में सरपंच के हाथ में नक़द कभी नहीं आता। इसी वजह से कई सरपंच मान लेते हैं कि मस्टर रोल की गड़बड़ी उनकी समस्या नहीं, मेट या रोज़गार सहायक की है। यह भ्रम महँगा पड़ता है।

कच्ची फ़ाइल करौली ज़िले की एक पंचायत, 2021। खेत-तलाई के काम पर चौदह दिन का एक मस्टर रोल चला। उसमें एक नाम था, रामप्यारी, जो उस पूरे पखवाड़े अपने बेटे के पास सूरत में थी। मेट उसका देवर था। हाज़िरी भरी गई, ₹221 रोज़ के हिसाब से ₹3,094 उसके खाते में गए, और खाते से निकले भी। सामाजिक अंकेक्षण में मैं पीछे की दरी पर बैठा था जब टीम ने मस्टर रोल पढ़ना शुरू किया। चौथे नाम पर रामप्यारी की पड़ोसन खड़ी हो गई: 'ये तो होली से पहले की गई हुई है, साब। अब तक नहीं आई।' सरपंच ने मेरी ओर देखा और कहा, 'चौधरी जी, तीन हज़ार रुपये के लिए इतना हल्ला?' हल्ला तीन हज़ार का नहीं था। एक फ़र्ज़ी नाम निकलते ही उस काम के सारे मस्टर रोल दोबारा खुले। मेट को काली सूची में डाला गया, रकम की वसूली हुई, और जाँच अधिकारी ने सत्यापन रजिस्टर पर सरपंच के दस्तख़त की तारीख़ें मिलानी शुरू कीं। काम पूरा होने का प्रमाण-पत्र सरपंच के हाथ से गया था। अगले साल उस पंचायत के नए काम की स्वीकृति चार महीने रुकी रही।

यह सरकारी तंत्र की एक पुरानी विडंबना है: लाखों का पुल टेढ़ा बन जाए तो फ़ाइल बरसों घूमती रहती है, पर तीन हज़ार की फ़र्ज़ी हाज़िरी सीधे पंचायत की साख पर ठप्पा लगा देती है, क्योंकि उसका सबूत पड़ोसन की ज़ुबान पर होता है।

आप हर दिन साइट पर नहीं रह सकते। पर तीन काम आपके बस में हैं:

- **मेट का चुनाव ग्राम सभा में करवाइए,** किसी वार्ड पंच के रिश्तेदार को चुपचाप रख लेने के बजाय। कई राज्य महिला मेट को प्राथमिकता देते हैं। अपने राज्य का परिपत्र देखिए।
- **बिना बताए साइट पर जाइए** और मस्टर रोल के नाम ज़ोर से पढ़िए। जो नाम बोलने पर कोई हाथ न उठे, वहीं पेन रख दीजिए।

- **NMMS की फ़ोटो रोज़ खोलकर देखिए।** एक ही चेहरे, एक ही कुर्ते और पीछे एक ही पेड़ वाली फ़ोटो लगातार चार दिन दिखे, तो मेट से पूछिए।

मंजू बाई ने गोपाल सिंह की सड़क के लिए मेट ग्राम सभा से चुनवाया: पश्चिमी टोले की आठवीं पास लड़की कविता, जिसका नाम पहली बार किसी सरकारी रजिस्टर में किसी ज़िम्मेदारी के साथ लिखा गया। पहले ही दिन कविता ने मस्टर रोल का एक नाम लौटा दिया।

'दीदी, ये गोपाल काका के बड़े लड़के का नाम है,' उसने कहा। 'वो तो भोपाल में पढ़ता है।'

गुणवत्ता की जाँच: सीमेंट की बोरी गिनना सरपंच का काम क्यों है

नाम कटा। गोपाल सिंह दो दिन मंजू बाई से नहीं बोले, फिर सड़क पर काम देखने रोज़ आने लगे, क्योंकि सड़क आख़िर उन्हीं के खेत तक जा रही थी। और यहीं से इस काम का दूसरा, कम चर्चित ख़तरा शुरू हुआ। मस्टर रोल की गड़बड़ी हाज़िरी में छिपती है। गुणवत्ता की गड़बड़ी मसाले में छिपती है, और मसाला सूखने के बाद कुछ नहीं बताता।

ज़्यादातर सरपंच मानते हैं कि गुणवत्ता देखना JEN का काम है। काग़ज़ पर ऐसा ही है। पर JEN के पास एक ब्लॉक में चालीस-पचास पंचायतें होती हैं, और वे किसी साइट पर महीने में दो बार पहुँच जाएँ तो बड़ी बात है। ढलाई के दिन, जब मिक्सर चल रहा होता है और ट्रैक्टर से रेत उतर रही होती है, वहाँ अक्सर कोई इंजीनियर नहीं होता। वहाँ मेट होता है, ठेकेदार का मुंशी होता है, और अगर आप चाहें तो आप होते हैं।

हिसाब सीधा है, और आपको इसके लिए इंजीनियर होने की ज़रूरत नहीं। 100 मीटर लंबी, 3 मीटर चौड़ी और 15 सेंटीमीटर मोटी सीसी सड़क में लगभग 45 घन मीटर कंक्रीट लगता है। M15 मसाले (1 भाग सीमेंट, 2 रेत, 4 गिट्टी) में एक घन मीटर पर मोटे तौर पर साढ़े छह बोरी सीमेंट जाती है। यानी उस टुकड़े में क़रीब 290 बोरियाँ। प्राक्कलन में यह संख्या लिखी होती है। प्राक्कलन की वह पंक्ति अपने फ़ोन में फ़ोटो खींचकर रख लीजिए।

फिर ढलाई के दिन चार चीज़ें देखिए:

1. **बोरियाँ गिनिए, और ख़ाली बोरियाँ फिंकवाइए मत।** शाम को ख़ाली बोरियों का ढेर गिनना सबसे सस्ती जाँच है। 290 की जगह 210 निकलीं, तो मसाला पतला गया।
2. **बोरी पर छपी तारीख़ पढ़िए।** सीमेंट पुराना होने के साथ कमज़ोर पड़ता है। तीन महीने से पुरानी बोरी या गाँठ पड़ा सीमेंट लौटवा दीजिए।
3. **मोटाई नापिए।** एक फ़ीता और लकड़ी की एक खपच्ची काफ़ी है। किनारे पर 15 सेंटीमीटर, बीच में 11, यह बहुत आम चाल है।
4. **तराई के दिन गिनिए।** ढलाई के बाद कम से कम चौदह दिन पानी। सातवें दिन सड़क सूखी दिखे, तो वह साल भर में दरारों से बता देगी।

और जो देखा, वह लिखिए। स्टॉक रजिस्टर में उस दिन कितनी बोरियाँ निर्गम हुईं, निरीक्षण टिप्पणी में कितनी गिनी गईं, और दोनों पर तारीख़ के साथ आपके दस्तख़त। झालावाड़ के 120 कट्टों वाला मामला इसी अंतर से बना था।

मैं ईमानदारी से कहूँ तो कुछ बरस पहले तक मैं प्रशिक्षणों में सरपंचों से कहता था कि वे JEN से क्यूब टेस्ट (कंक्रीट के नमूने की प्रयोगशाला जाँच) की माँग लिखित में करें। अब मैं उतने यक़ीन से नहीं कहता। कई ब्लॉकों में प्रयोगशाला ज़िले पर है, नमूना महीनों पड़ा रहता है, और मुझे पक्का पता नहीं कि हर राज्य में सरपंच के कहने पर यह जाँच अनिवार्य होती है। अपने राज्य के ग्रामीण विकास विभाग का परिपत्र देखिए। बोरियाँ गिनना किसी परिपत्र का मोहताज नहीं।

मंजू बाई सड़क की पहली ढलाई के दिन सुबह सात बजे पहुँचीं, जब मिक्सर अभी गरम हो रहा था। कविता ने ख़ाली बोरियाँ एक-एक करके नीम के नीचे जमानी शुरू कीं, दस-दस की गड्डी में। दोपहर तक उन्नीस गड्डियाँ थीं। ठेकेदार का मुंशी पास आया, गड्डियाँ देखीं, और बोला, 'दीदी, इनका क्या करोगी? कबाड़ी तो दो रुपये में भी नहीं लेगा।'

'गिनूँगी,' कविता ने कहा, और बीसवीं गड्डी बाँधने लगी।

काम का अंत: जियो-टैग, फ़ोटो और परिसंपत्ति रजिस्टर

शाम को कविता ने गड्डियाँ गिनीं: बीस पूरी और सात बोरियाँ अलग, यानी 207। उस दिन की ढलाई का हिसाब प्राक्कलन से मिलाया गया तो 212 बोरियाँ बनती थीं। पाँच का अंतर निकला। मुंशी ने बताया कि पाँच बोरियाँ पिछली रात की बारिश में गल गई थीं। मंजू बाई ने बहस नहीं की, बस निरीक्षण टिप्पणी में लिख दिया: 'गली हुई 5 बोरियाँ स्टॉक से घटाई जाएँ, बदले में नई आएँ।' अगली सुबह पाँच नई बोरियाँ नीम के नीचे रखी थीं।

सड़क अक्टूबर के आख़िर में पूरी हुई। ज़्यादातर सरपंच मानते हैं कि काम यहीं ख़त्म हो गया। काग़ज़ के हिसाब से काम का आख़िरी चरण अभी शुरू हुआ है, और यही वह चरण है जिसे सबसे ज़्यादा टाला जाता है, क्योंकि इसमें न मिट्टी है, न मज़दूर, न फ़ीता काटने वाला कोई मौक़ा। तीन चीज़ें बचती हैं।

1. **जियो-टैग वाली फ़ोटो।** मनरेगा के कामों में आम तौर पर तीन चरणों की फ़ोटो चढ़ती है: काम शुरू होने से पहले, काम के दौरान, और पूरा होने के बाद। हर फ़ोटो के साथ उस जगह का अक्षांश-देशांतर अपने आप दर्ज होता है। वित्त आयोग के कामों के लिए eGramSwaraj से जुड़ा अलग मोबाइल ऐप है। कौन-सा ऐप, कितने चरण, यह योजना और राज्य के हिसाब से बदलता है, इसलिए अपने ब्लॉक के तकनीकी सहायक से लिखित में पूछ लीजिए।
2. **नागरिक सूचना बोर्ड।** काम का नाम, लागत, स्वीकृति की तारीख़, लंबाई-चौड़ाई, कार्यकारी संस्था। पत्थर या पक्की दीवार पर, पेंट से।

3. **परिसंपत्ति रजिस्टर में प्रविष्टि।** परिसंपत्ति की पहचान संख्या, जगह, लागत, पूरा होने की तारीख़, किस योजना का पैसा लगा, और रख-रखाव की ज़िम्मेदारी किसकी है।

कच्ची फ़ाइल *2020 में दौसा ज़िले की एक पंचायत ने मनरेगा के तहत ₹4,60,000 में बने तालाब-गहरीकरण की "पूरा होने के बाद" वाली फ़ोटो चढ़ाई। फ़ोटो सुंदर थी: भरा हुआ तालाब, किनारे पर बकरियाँ। ज़िले की निगरानी टीम ने निर्देशांक नक्शे पर डाले तो जगह पड़ोसी पंचायत का पुराना तालाब निकली, कोई 3.2 किलोमीटर दूर। सचिव का कहना था कि रोज़गार सहायक ने 'जल्दी में' दूसरी फ़ोटो लगा दी। असली तालाब का काम आधा ही हुआ था। पूरे काम का भुगतान संदिग्ध माना गया, रोज़गार सहायक की सेवा समाप्त हुई, और सरपंच को पूर्णता प्रमाण-पत्र पर दस्तख़त के लिए वसूली नोटिस मिला। फ़ोटो झूठ नहीं बोलती। उसके साथ चिपके अंक बोल देते हैं।*

परिसंपत्ति रजिस्टर को मैं पंचायत का सबसे उपेक्षित काग़ज़ मानता हूँ। प्रशिक्षणों में जब मैं पूछता हूँ कि आपकी पंचायत में कितने हैंडपंप, कितनी पुलियाँ, कितने मीटर सीसी सड़क है, तो दस में से आठ सरपंच अंदाज़े से बताते हैं। फिर पाँच साल बाद कोई पूछता है कि 2021 में बनी नाली की मरम्मत पर दोबारा ₹70,000 क्यों ख़र्च हुए, और जवाब किसी के पास नहीं होता, क्योंकि रजिस्टर में वह नाली कभी चढ़ी ही नहीं।

मंजू बाई ने 2 नवंबर को सड़क की आख़िरी फ़ोटो खिंचवाई। कविता ने फ़ोन ऊँचा उठाकर सड़क के सिरे पर खड़े होकर फ़ोटो ली, जहाँ गोपाल सिंह का खेत शुरू होता है। स्क्रीन के कोने में अंक चमक रहे थे। सचिव परिसंपत्ति रजिस्टर लेकर आए और नई पंक्ति में लिखना शुरू किया: नाम, लंबाई 420 मीटर, लागत, योजना।

'ज़मीन का खसरा नंबर?' उन्होंने पूछा।

किसी को नहीं पता था। सड़क का आख़िरी हिस्सा जिस पट्टी से गुज़रता था, वह गोपाल सिंह कहते थे पंचायत की है, और पंचायत के पास उसका कोई काग़ज़ नहीं था। स्कूल की टंकी वाले नलकूप का भी यही हाल था, जिस पर JEN ने सवाल उठाया था।

मंजू बाई ने रजिस्टर का वह ख़ाना ख़ाली छोड़ दिया और फ़ोन उठाया। 'पटवारी जी का नंबर किसके पास है?'

सचिव ने कहा, 'बाई सा, पटवारी जी मंगलवार को तहसील में मिलते हैं। और फ़ोन वो उठाते नहीं।'

अध्याय 8

विभागों के बीच पुल

फ़ाइल के पैर नहीं होते

ब्लॉक कार्यालय में फ़ाइल अपने आप नहीं चलती। उसे कोई उठाकर एक मेज़ से दूसरी मेज़ तक ले जाता है, और जिस दिन वह आदमी छुट्टी पर होता है, उस दिन आपकी पुलिया भी छुट्टी पर होती है। मध्य प्रदेश में इसे जनपद पंचायत कहते हैं, राजस्थान में पंचायत समिति, बिहार में प्रखंड कार्यालय। नाम बदलता है, अफ़सर का पदनाम बदलता है (CEO जनपद, BDO, प्रखंड विकास पदाधिकारी), पर मेज़ों का क्रम लगभग हर जगह एक-सा मिलता है। मैंने 2019 में आष्टा जनपद में एक तकनीकी स्वीकृति की फ़ाइल का पीछा किया था। वह सात हाथों से गुज़री: आवक बाबू, शाखा लिपिक, उपयंत्री, सहायक यंत्री, लेखा शाखा, फिर CEO के निज सहायक, और आख़िर में CEO की मेज़। सात में से चार जगह वह रुकी। किसी ने रिश्वत नहीं माँगी। बस किसी को जल्दी नहीं थी।

मंजू बाई को पटवारी तक पहुँचने से पहले यही सीखना पड़ा। नलकूप की ज़मीन का सवाल राजस्व विभाग का था, पर उसका असर जनपद की फ़ाइल पर पड़ रहा था, क्योंकि टंकी का भुगतान तब तक रुका रहता जब तक परिसंपत्ति रजिस्टर का ख़ाना भरा न जाए। एक विभाग की कमी, दूसरे विभाग की मेज़ पर अटकी। ब्लॉक की राजनीति का सबसे बड़ा हिस्सा यही है, और इसमें कोई खलनायक नहीं होता।

आवक नंबर: आपकी पहली रसीद

ब्लॉक में दिया गया हर काग़ज़ आवक रजिस्टर में चढ़ना चाहिए, और उसका नंबर आपकी डायरी में। यह नियम इतना साधारण है कि ज़्यादातर सरपंच इसे छोड़ देते हैं। 2016 में दौसा ज़िले के एक सरपंच रामकिशन ने ₹2,40,000 के खड़ंजे का प्राक्कलन पंचायत समिति में दिया। बाबू ने काग़ज़ लिया, मुस्कुराए और बोले, 'हो जाएगा, सरपंच जी।' सात हफ़्ते बाद राम-

किशन पूछने गए तो किसी को फ़ाइल याद नहीं थी। आवक रजिस्टर में कोई प्रविष्टि नहीं। प्राक्कलन दोबारा बनवाना पड़ा, JEN के दोबारा दस्तख़त हुए, और तब तक बारिश आ गई।

बाद में रामकिशन ने मुझसे कहा, 'चौधरी जी, उस दिन मैंने सोचा था नंबर माँगना बेइज़्ज़ती लगेगी।' नंबर माँगना बेइज़्ज़ती नहीं है। यह उस बाबू को भी बचाता है, जिसकी मेज़ पर रोज़ चालीस काग़ज़ आते हैं।

ब्लॉक जाते समय इन चीज़ों का ध्यान रखें:

1. हर पत्र की दो प्रतियाँ ले जाएँ। एक जमा करें, दूसरी पर आवक मुहर और नंबर लगवाकर वापस लाएँ।
2. पंचायत भवन में एक **जावक-आवक डायरी** रखें, जिसमें तारीख़, विषय, किस शाखा को दिया और आवक नंबर लिखा हो।
3. पंद्रह दिन में जवाब न आए तो उसी नंबर का हवाला देकर लिखित स्मरण-पत्र दें। फ़ोन पर पूछी गई बात का कोई रिकॉर्ड नहीं बनता।
4. 'कमी-पूर्ति' का पत्र आए तो उसे अपमान न समझें। उसमें लिखी हर आपत्ति का अलग-अलग, क्रमवार जवाब दें।

कहाँ अटकती है, और क्यों

फ़ाइलें तीन कारणों से रुकती हैं, और मेरे अनुभव में भ्रष्टाचार इनमें सबसे कम बार आता है। पहला, काग़ज़ अधूरा होता है: प्राक्कलन पर JEN के दस्तख़त हैं, सहायक यंत्री के नहीं। दूसरा, बजट शीर्ष साफ़ नहीं होता, और लेखा शाखा तय नहीं कर पाती कि पैसा पंद्रहवें वित्त आयोग से जाएगा या राज्य वित्त आयोग से। तीसरा, अफ़सर बदल जाता है, और नया अफ़सर पुराने के अधूरे काम पर दस्तख़त करने से पहले हर काग़ज़ दोबारा पढ़ना चाहता है। यह तीसरा कारण मुझे पहले चिढ़ाता था। अब मैं पक्का नहीं कह सकता कि नया अफ़सर ग़लत होता है। जिस आदमी पर कल ऑडिट आएगा, उसकी सावधानी को सुस्ती कहना आसान है।

और एक चौथी चीज़ है, जिसे कोई परिपत्र नहीं लिखता: **बिचौलिया**। हर ब्लॉक के बाहर चाय की दुकान पर कोई न कोई बैठा मिलता है जो कहता है कि वह 'साहब से करवा देगा'। उसके रास्ते फ़ाइल कभी-कभी तेज़ चलती भी है। पर फिर हर अगली फ़ाइल उसी रास्ते से जाती है, और उसकी क़ीमत बढ़ती जाती है।

मंजू बाई ने बुधवार सुबह जनपद के आवक बाबू से टंकी वाली फ़ाइल का हाल पूछा। बाबू ने रजिस्टर खोला, उँगली नीचे सरकाई और एक पंक्ति पर रोक दी। 'लेखा शाखा में है, बाई सा। वहाँ से आपत्ति लगी है।' 'कैसी आपत्ति?' बाबू ने चश्मा उतारा। 'वो तो लेखा वाले बताएँगे। पर वो आज सीहोर गए हैं, मीटिंग में।'

जिनकी तनख़्वाह आप नहीं देते

ब्लॉक की फ़ाइल तो फिर भी किसी रजिस्टर में दर्ज होती है। गाँव में काम करने वाले सरकारी कर्मचारियों के साथ आपका रिश्ता किसी रजिस्टर में नहीं लिखा होता, और यहीं ज़्यादातर नए सरपंच पहली ठोकर खाते हैं। आशा, ANM, आँगनवाड़ी कार्यकर्ता, पटवारी, स्कूल के प्रधानाध्यापक, राशन डीलर: इनमें से कोई भी आपका मातहत नहीं है। आशा स्वास्थ्य विभाग को जवाब देती है, आँगनवाड़ी कार्यकर्ता महिला एवं बाल विकास के सुपरवाइज़र को, पटवारी तहसीलदार को। आपके पास इन्हें आदेश देने का अधिकार लगभग नहीं के बराबर है। पर गाँव मानता है कि है। जब आँगनवाड़ी में दलिया नहीं बँटता, तो लोग सरपंच के दरवाज़े पर आते हैं, CDPO के नहीं।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *ग्यारहवीं अनुसूची में स्वास्थ्य, महिला एवं बाल विकास, प्राथमिक शिक्षा और सार्वजनिक वितरण प्रणाली शामिल हैं, पर इन विभागों के कर्मचारियों पर पंचायत का कितना नियंत्रण होगा, यह राज्य तय करता है। केरल ने कई संस्थाएँ और उनके कर्मचारी पंचायतों को सौंपे हैं। हिंदी-भाषी राज्यों में ज़्यादातर जगह पंचायत को केवल निगरानी, उपस्थिति-प्रमाणन या समिति में सदस्यता का अधिकार मिला है। आपके राज्य में क्या है, यह अपने पंचायती राज अधिनियम और संबंधित विभाग के परिपत्र में देखें।*

जिस सरपंच ने आदेश दिया

2020 में राजसमंद ज़िले के एक नए सरपंच ने कोविड के दिनों में गाँव की आशा सहयोगिनी को पंचायत भवन बुलाया और कहा, 'कल से रोज़ शाम को मुझे रिपोर्ट देना, कौन बीमार है, कौन बाहर से आया।' आशा ने तीन दिन रिपोर्ट दी। चौथे दिन वह नहीं आई। सरपंच ने उसके घर संदेश भेजा कि 'नौकरी करनी है या नहीं।' आशा ने यह बात अपने सेक्टर की ANM को बताई, ANM ने ब्लॉक CMHO को, और दो हफ़्ते बाद सरपंच के पास एक पत्र आया जिसमें लिखा था कि आशा को निर्देश देने का अधिकार ग्राम पंचायत को नहीं है। उस साल के बाक़ी महीनों में उस गाँव का टीकाकरण आँकड़ा ब्लॉक में सबसे नीचे रहा। आशा अपना काम करती रही। बस सरपंच को कुछ बताना बंद कर दिया।

उसी ब्लॉक के दूसरे छोर पर एक सरपंच महिला ने हर महीने के पहले सोमवार को पंचायत भवन में आधे घंटे की बैठक शुरू की: आशा, आँगनवाड़ी कार्यकर्ता, ANM और स्कूल के मास्टर जी। चाय पंचायत की, एजेंडा कोई नहीं। पहली बैठक में ANM ने शिकायत की कि उपस्वास्थ्य केंद्र का बल्ब आठ महीने से फ़्यूज़ है और रात में प्रसव टॉर्च की रोशनी में होते हैं। बल्ब ₹180 का था। अगले दिन लग गया। **रिश्ता ₹180 के बल्ब से बनता है, ₹18 लाख की योजना से नहीं।**

पटवारी की कुर्सी के सामने

मंजू बाई के लिए पटवारी सबसे कठिन आदमी निकले, और इसमें उनकी कोई बदनीयती नहीं थी। उनके हलके में चार गाँव थे, और वे हफ़्ते में दो दिन ही आते थे। रामप्रसाद की सहमति वाले ग्यारह दिनों में से छह तो इसी इंतज़ार में गए। मंजू बाई ने बाद में मुझे बताया कि उन्होंने तीसरी मुलाक़ात से तरीक़ा बदला: खसरा नंबर, पिछली जमाबंदी की फ़ोटोकॉपी और सवाल, तीनों एक काग़ज़ पर लिखकर ले गईं। 'पहले मैं बोलती थी, वो सुनते थे। फिर मैंने लिखकर दिया, तो उन्होंने वहीं बैठे-बैठे जवाब लिख दिया।'

मुझे ठीक-ठीक नहीं पता कि यह तरीक़ा हर पटवारी पर काम करता है। कुछ पटवारी लिखित सवाल से घबराते हैं और टालने लगते हैं। पर जिस कर्मचारी के पास काम ज़्यादा और समय कम हो, उसके सामने तैयार काग़ज़ रखना उसका आधा काम कर देना है।

इन कर्मचारियों के साथ कुछ बातें लगभग हर जगह काम आती हैं:

1. उनकी कमी सबके सामने न गिनाएँ। ग्राम सभा में आँगनवाड़ी कार्यकर्ता को लताड़ने से दलिया नहीं आता, बस वह अगली सभा में नहीं आती।
2. शिकायत ऊपर भेजनी हो, तो पहले उन्हें बताएँ। अक्सर ग़लती उनकी नहीं, सप्लाई की होती है।
3. उनके रजिस्टर देखने का अधिकार आपके राज्य में है या नहीं, यह पता करें। जहाँ है, वहाँ महीने में एक बार देखें, हर हफ़्ते नहीं।
4. राशन डीलर से कभी अकेले में पैसे की बात न करें। उसकी दुकान का हिसाब निगरानी समिति के सामने हो।

2022 में नालंदा ज़िले के एक मुखिया ने यही चौथी बात भूलकर गाँव के डीलर से 'त्योहार का सहयोग' लिया था, ₹5,000। छह महीने बाद जब कार्डधारकों ने कम राशन की शिकायत की, तो मुखिया के पास शिकायत आगे भेजने का मुँह नहीं बचा था। डीलर ने उनसे बस इतना कहा, 'मुखिया जी, आप भी तो समझते हैं।'

सूची में एक नाम

आवास, पेंशन और राशन कार्ड की फ़ाइलें पंचायत भवन में सबसे पतली होती हैं, और सबसे भारी। सड़क ग़लत बने तो पूरा गाँव देखता है। किसी विधवा का नाम पेंशन की सूची से छूट जाए तो केवल वह देखती है, और वह अक्सर शिकायत करने ब्लॉक तक नहीं जाती।

इन योजनाओं में पंचायत पैसा नहीं बाँटती। पैसा सीधे लाभार्थी के खाते में जाता है। पर पात्रता की जाँच, सत्यापन का पत्र, ग्राम सभा में सूची का पढ़ा जाना: यह सब आपकी कलम से होकर गुज़रता है। प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) में सूची ऊपर से सर्वे के आधार पर आती है, और ग्राम सभा उसमें से अपात्र नाम हटा सकती है, क्रम पर सवाल उठा सकती है। मनमर्ज़ी

से नाम जोड़ नहीं सकती। बहुत से सरपंच इसी फ़र्क़ को नहीं समझते। वे सोचते हैं कि सूची उनकी है। सूची सर्वे की है। उनका काम उसे सच बनाना है।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *2019 में सागर ज़िले की एक पंचायत में आवास की सूची में एक परिवार का नाम था जिसके पास पहले से दो कमरों का पक्का मकान था। ग्राम सभा में किसी ने आपत्ति नहीं की। सरपंच ने सत्यापन पत्र पर दस्तख़त कर दिए, क्योंकि सचिव ने कहा था, 'सर्वे वाली सूची है, हमें क्या।' पहली किस्त जारी हो गई। 2021 की जाँच में मकान की पुरानी फ़ोटो निकली। वसूली की कार्यवाही लाभार्थी पर तो हुई ही, सत्यापन करने वालों से भी लिखित जवाब माँगा गया। सरपंच का जवाब था कि उन्होंने 'सूची पर भरोसा किया'। जाँच अधिकारी ने उस पंक्ति के नीचे लाल पेन से रेखा खींच दी।*

आपका दस्तख़त सत्यापन है, औपचारिकता नहीं। जिस घर को आपने देखा नहीं, उसके काग़ज़ पर लिखिए कि आपने देखा नहीं।

नाले के उस पार की चिट्ठियाँ

पश्चिमी टोले के तेईस घर, जिन्हें मंजू बाई के सामाजिक मानचित्र ने पहली बार काग़ज़ पर उतारा था, जनवरी 2024 में फिर सामने आए। उनमें चार बुज़ुर्ग महिलाएँ अकेली रहती थीं। दो के पास विधवा पेंशन नहीं थी। एक के पास आधार था, बैंक खाता नहीं। दूसरी के पति की मृत्यु 2016 में हुई थी, और मृत्यु प्रमाणपत्र कभी बना ही नहीं।

मंजू बाई ने यह काम सचिव पर नहीं छोड़ा। आशा सहयोगिनी के साथ गईं, उसी के फ़ोन से फ़ोटो खिंचवाईं, और दोनों आवेदन एक ही दिन जनपद में जमा करवाए, पावती के साथ। मृत्यु प्रमाणपत्र में सात हफ़्ते लगे, क्योंकि देर से पंजीकरण के लिए गवाहों के शपथ-पत्र चाहिए थे। एक गवाह गोपाल सिंह बने, वही जिनकी 420 मीटर की सड़क अंक-पद्धति में छठे नंबर पर गई थी।

'सड़क तो बनेगी नहीं अभी,' उन्होंने दस्तख़त करते हुए कहा, 'ये तो कर दें।'

पेंशन की सिफ़ारिश में सरपंच की भूमिका राज्य-दर-राज्य बदलती है। कहीं सरपंच का सत्यापन ज़रूरी है, कहीं केवल ग्राम सभा की सूची, कहीं सब कुछ पोर्टल पर विभाग का अधिकारी करता है। अपने राज्य का नियम पंचायत भवन की दीवार पर लिखवा लीजिए, ताकि कोई यह न कहे कि सरपंच ने रोका।

ड्रोन के बाद की सभा

SVAMITVA में ड्रोन आबादी क्षेत्र की तस्वीर लेता है, और फिर नक्शे पर हर घर की सीमा खिंचती है। यहाँ पंचायत का काम सबसे नाज़ुक है: नक्शा गाँव के सामने पढ़ा जाता है और

आपत्तियाँ दर्ज होती हैं। 2022 में टोंक ज़िले के एक गाँव में नक्शा पढ़ते समय दो भाइयों ने एक ही आँगन पर दावा किया। सरपंच ने फ़ैसला सुनाने की कोशिश नहीं की, आपत्ति लिखी, दोनों से दस्तख़त करवाए और फ़ाइल राजस्व विभाग को भेज दी।

मैं इस पर पहले दूसरी राय रखता था। मुझे लगता था कि सरपंच गाँव का आदमी है, उसे वहीं सुलझा देना चाहिए। अब मुझे इतना पक्का नहीं लगता। संपत्ति कार्ड पर लिखा नाम बैंक का क़र्ज़ तय करता है, बँटवारा तय करता है। उस पर सरपंच की ज़ुबानी राय बीस साल बाद किसी अदालत में किसी काम की नहीं होगी।

उस आँगन में आज भी दोनों भाइयों की चारपाइयाँ पड़ी हैं, एक-दूसरे की ओर पीठ करके।

अभिसरण: एक काम, कई योजनाएँ, एक फ़ाइल

बाराँ ज़िले की एक पंचायत में गाँव के दक्षिण में एक पुराना तालाब था, जिसे लोग 'बड़की नाडी' कहते थे। 2021 तक उसमें इतनी गाद भर चुकी थी कि बारिश का पानी अक्टूबर में ही सूख जाता था। सरपंच रामनिवास के पास पंद्रहवें वित्त आयोग के बँधे अनुदान में से इस साल ₹2,40,000 बचते थे। तालाब का पूरा प्राक्कलन ₹11 लाख से ऊपर था। अकेले यह पैसा कुछ नहीं कर सकता था।

मैं उस साल उनकी पंचायत में GPDP के प्रशिक्षण के लिए गया था। रामनिवास ने कहा, 'चौधरी जी, या तो खुदाई करवा लूँ या पाळ बँधवा लूँ। दोनों का पैसा नहीं।' दोनों हुए। चार अलग जेबों से।

- **मनरेगा** से खुदाई और गाद निकालना: 214 जॉब कार्डधारकों की मज़दूरी, कुल ₹6,85,000।
- **पंद्रहवें वित्त आयोग का बँधा अनुदान** से इनलेट, सिल्ट-ट्रैप और पत्थर की सीढ़ियाँ: ₹2,40,000। वर्षा जल संचयन इसी अनुदान के दायरे में आता है, इसलिए ऑडिट को यहाँ कुछ पकड़ने को नहीं मिला।
- **राज्य की जल संरक्षण योजना** से पाळ की पिचिंग: ₹1,90,000।
- **वन विभाग** से पाळ पर 340 पौधे और उनकी दो साल की देखरेख, जिसका पैसा पंचायत के खाते में आया ही नहीं।

असली काम पैसा जोड़ना नहीं था। असली काम यह था कि चार योजनाओं का पैसा एक ही ज़मीन पर गिरे और फिर भी किसी ऑडिट में यह न लगे कि एक ही काम का भुगतान दो बार हुआ। भिंड वाली सड़क याद कीजिए, जिसकी जाँच ग्यारह महीने चली। अभिसरण में यही ख़तरा चार गुना होता है।

रामनिवास ने JEN के साथ बैठकर एक ही प्राक्कलन बनवाया, जिसमें हर हिस्से के आगे लिखा गया कि वह किस योजना से होगा। खुदाई की माप पुस्तिका अलग, इनलेट की अलग,

पिचिंग की अलग। परिसंपत्ति रजिस्टर में तालाब एक ही प्रविष्टि बना, और उसके नीचे चार पंक्तियाँ: कौन-सी योजना, कितनी राशि, किस हिस्से पर। ग्राम सभा में उन्होंने एक काग़ज़ पढ़ा जिसमें चारों राशियाँ एक साथ लिखी थीं।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *अभिसरण के लिए कोई एक केंद्रीय धारा नहीं है। मनरेगा के दिशानिर्देश दूसरी योजनाओं के साथ जोड़ने की अनुमति देते हैं, पर सामग्री और मज़दूरी के अनुपात की शर्त हर हाल में लागू रहती है। वित्त आयोग का बँधा अनुदान केवल अपने तय कामों पर लगेगा। राज्य योजनाओं में किसी दूसरी योजना से जोड़ने की शर्तें राज्य के आदेश से तय होती हैं, और कई राज्यों में इसके लिए ज़िला स्तर की अलग स्वीकृति चाहिए। अपने राज्य का परिपत्र लिखित में लीजिए, ठीक वैसे जैसे मंजू बाई ने स्वीकृति-सीमा वाला परिपत्र लिया था।*

अभिसरण की फ़ाइल बनाते समय कुछ चीज़ें एक जगह होनी चाहिए:

1. एक संयुक्त प्राक्कलन, जिसमें हर हिस्से के आगे योजना का नाम।
2. हर योजना की अलग तकनीकी स्वीकृति, पर सबकी फ़ोटोकॉपी एक ही फ़ाइल में।
3. हर हिस्से की अलग माप पुस्तिका, और पहले पन्ने पर दूसरी पुस्तिकाओं का हवाला।
4. काम शुरू होने से पहले, बीच में और बाद में एक ही कोण से ली गई जियो-टैग फ़ोटो।
5. परिसंपत्ति रजिस्टर में एक प्रविष्टि, कई स्रोत।

मैं ईमानदारी से कहूँ तो यह तरीक़ा हर ब्लॉक में नहीं चलता। कुछ BDO साफ़ कहते हैं कि दो योजनाओं को एक काम पर जोड़ने से 'जाँच में दिक़्क़त' आती है, और फ़ाइल लौटा देते हैं। रामनिवास के ब्लॉक में भी पहली बार फ़ाइल लौटी थी। दूसरी बार वे परिसंपत्ति रजिस्टर का वह पन्ना साथ ले गए जिसमें चारों पंक्तियाँ लिखी थीं। BDO ने दस मिनट पन्ना पलटा और कहा, 'ये पहले क्यों नहीं दिखाया?'

अगस्त 2022 में बड़की नाडी पहली बार पाळ तक भरी। पाळ पर नीम और करंज के पौधे घुटनों तक आ चुके थे। मवेशी शाम को वहीं पानी पीने आने लगे।

उसी गाँव की पहाड़ी पर जल जीवन मिशन की टंकी मार्च 2022 में बनकर तैयार हो चुकी थी। नीला रंग, ऊपर पंचायत का नाम, नीचे उद्घाटन का पत्थर। बड़की नाडी लबालब थी, फिर भी औरतें सुबह साढ़े पाँच बजे बर्तन लेकर पुराने हैंडपंप की कतार में खड़ी थीं। उनके घरों के आगे लगे नलों की टोंटियों पर मकड़ी के जाले थे।

'टंकी तो बन गई, सरपंच जी,' एक औरत ने कहा। 'पानी किस योजना से आएगा?'

अध्याय 9

पानी, सफ़ाई और सेहत

टंकी का उद्घाटन और टोंटी की चुप्पी

टोंटी घुमाने पर पहले हवा निकलती है, सूँ-सूँ की आवाज़ के साथ, और फिर कुछ नहीं। बाराँ ज़िले के उस गाँव में यही आवाज़ अप्रैल 2022 से अगस्त तक हर घर में सुनी गई। रामनिवास ने मुझे बताया था कि शुरू के दो हफ़्ते लोग रोज़ टोंटी घुमाते थे, फिर हफ़्ते में एक बार, और जून आते-आते बच्चों ने उन पर पतंग की डोर लपेटनी शुरू कर दी।

टंकी में कोई ख़राबी नहीं थी। पाइपलाइन भी बिछ चुकी थी, 310 घरों तक। कमी तीन चीज़ों की थी, और तीनों काग़ज़ पर थीं। नलकूप की मोटर के लिए बिजली कनेक्शन का आवेदन डिस्कॉम में लंबित था, क्योंकि डिमांड नोट के ₹18,600 कौन भरेगा, यह तय नहीं हुआ था। ठेकेदार कहता था उसका काम टंकी और पाइप तक था। विभाग कहता था कि योजना पंचायत को सौंपी जा चुकी है। और सौंपे जाने का सबूत एक प्रमाणपत्र था, जिस पर उद्घाटन वाले दिन, फूलमालाओं और फ़ोटोग्राफ़र के बीच, रामनिवास ने ख़ुद दस्तख़त किए थे।

'साहब खड़े थे, विधायक जी आने वाले थे,' रामनिवास बोले। 'सचिव ने कहा बस औपचारिकता है। मैंने पढ़ा भी नहीं।'

उस एक पन्ने का शीर्षक था 'कार्य पूर्णता एवं हस्तांतरण प्रमाणपत्र'। उस पर दस्तख़त होते ही चलाने की ज़िम्मेदारी पंचायत की हो गई, और ठेकेदार की ज़मानत राशि लौटाने का रास्ता खुल गया। मोटर एक दिन भी नहीं चली थी।

बनाना एक बार, चलाना हर महीने

नल-जल योजना की सबसे बड़ी ग़लतफ़हमी यह है कि काम टंकी के साथ पूरा हो जाता है। असल में टंकी के साथ एक **मासिक बिल** शुरू होता है, जो अगले पचीस-तीस साल हर महीने आएगा। रामनिवास के गाँव में जब आख़िरकार सितंबर 2022 में पानी चला, तो पहले महीने का ख़र्च कुछ ऐसा बैठा:

- बिजली बिल: लगभग ₹4,200
- पंप ऑपरेटर का मानदेय: ₹3,000
- ब्लीचिंग पाउडर और क्लोरीन की गोलियाँ: ₹450
- लीकेज की छोटी मरम्मत (दो जगह पाइप फटा): ₹1,100

कुल ₹8,750। हर महीने। यह पैसा किसी योजना से अपने आप नहीं आता। पंद्रहवें वित्त आयोग के बँधे अनुदान से पेयजल के रखरखाव पर ख़र्च हो सकता है, पर वह अनुदान साल में दो किस्तों में आता है और उसी में सफ़ाई के काम भी निपटाने होते हैं। बाक़ी का रास्ता एक ही है: **जल-शुल्क**, यानी हर घर से महीने का तय पैसा।

रामनिवास ने ₹50 प्रति घर तय किया। हिसाब सीधा था: 310 घर, ₹15,500 महीना, ख़र्च निकालकर हर महीने ₹6,750 मरम्मत कोष में। पहले महीने 212 घरों ने दिया। तीसरे महीने 140 ने। जिन घरों में टोंटी पर पानी कम दबाव से आता था (ऊपर के टोले में, टंकी से सबसे दूर) उन्होंने सबसे पहले देना बंद किया, और उनकी बात में दम था।

समिति जो काग़ज़ पर बनी थी

जल जीवन मिशन के दिशानिर्देश हर गाँव में **ग्राम जल एवं स्वच्छता समिति** (VWSC, कई राज्यों में इसे पानी समिति कहते हैं) बनाने को कहते हैं, जिसमें आधे सदस्य महिलाएँ हों और कमज़ोर वर्गों का प्रतिनिधित्व हो। रामनिवास के गाँव में समिति 2020 में बनी थी। उसकी बैठकों का रजिस्टर मैंने देखा: चार बैठकें, चारों का विवरण एक ही लिखावट में, और ग्यारह में से सात सदस्यों के दस्तख़त हर बार एक जैसे, जैसे किसी ने एक साँस में करवा लिए हों। समिति की दो महिला सदस्यों को पूछने पर पता चला कि वे सदस्य हैं।

मैं मानता हूँ कि मुझे शुरू में लगता था यह समिति एक और सरकारी खानापूर्ति है, जो हर योजना के साथ आती है और योजना के साथ चली जाती है। बाराँ के बाद मेरी राय बदली। जिन गाँवों में मैंने नल-जल योजना को तीसरे और चौथे साल तक चलते देखा, उनमें सरपंच अच्छा था या नहीं, यह उतना मायने नहीं रखता था। मायने यह रखता था कि शुल्क कौन वसूलता है, और वसूली का हिसाब किसके सामने पढ़ा जाता है।

दिसंबर 2022 में रामनिवास ने समिति की पहली असली बैठक बुलाई, ऊपर के टोले की एक औरत के आँगन में। कमला बाई नाम की सदस्य ने सबसे पहले हाथ उठाया।

'पचास रुपया हम देंगे,' उन्होंने कहा। 'पर पहले वाल्व की चाबी किसके पास रहती है, ये बताओ।'

कमरे में हँसी फैली, फिर चुप्पी। जवाब सबको पता था। पंप ऑपरेटर शंकरलाल निचले टोले में रहते थे, और वाल्व की चाबी उनकी कमर में बँधे धागे से लटकती थी। सुबह छह बजे वाल्व खुलता, पहले निचले टोले की तरफ़, जहाँ उनका घर, उनके भाई का घर और चौपाल वाली दुकान थी। ऊपर के टोले तक पानी पौने आठ बजे पहुँचता, और बीस मिनट में दबाव गिर जाता।

जिन घरों ने ₹50 देना बंद किया था, वे बेईमान नहीं थे। वे बीस मिनट के पानी का दाम ₹50 नहीं मान रहे थे।

उस बैठक में तीन फ़ैसले हुए, और तीनों रजिस्टर में कमला बाई की बेटी ने लिखे, जो आठवीं पास थी:

1. वाल्व खुलने की समय-सारणी टंकी की दीवार पर पेंट से लिखी जाएगी। एक दिन निचला टोला पहले, अगले दिन ऊपर का।
2. शुल्क की रसीद-बुक समिति के पास रहेगी, ऑपरेटर के पास नहीं। हर रसीद की कार्बन कॉपी।
3. हर महीने की पहली तारीख़ को वसूली और ख़र्च का हिसाब टंकी के नीचे पढ़ा जाएगा, ज़ोर से।

शंकरलाल नाराज़ हुए। उन्होंने कहा, 'तो फिर चाबी भी ले लो।' कमला बाई ने ले ली।

मुफ़्त पानी का भ्रम

हैंडपंप के ज़माने में पानी का कोई बिल नहीं था। हैंडपंप ख़राब होता तो लोग पंचायत को कोसते, पंचायत PHED को लिखती, और दो महीने बाद मिस्त्री आता। इस बीच औरतें दूसरे टोले के कुएँ पर जातीं। उस मुफ़्त पानी की असली क़ीमत औरतों के घंटे थे, जो किसी रजिस्टर में दर्ज नहीं होते थे।

नल घर तक आया, तो वह क़ीमत ग़ायब नहीं हुई। उसका रूप बदला, और अब वह रुपये में माँगी जाती है। यही बात समझाना सरपंच के लिए सबसे कठिन है, क्योंकि गाँव के कान में दूसरी आवाज़ें भी पड़ती हैं। 'सरकार की टंकी है, सरकार का पानी है, पैसा किस बात का?' यह वाक्य मैंने बाराँ, विदिशा और रोहतास तीनों जगह लगभग इन्हीं शब्दों में सुना है।

कच्ची फ़ाइल *बाराँ के उसी ब्लॉक की एक दूसरी पंचायत में सरपंच ने 2022 के अंत में, अगले चुनाव को ध्यान में रखकर, ग्राम सभा में घोषणा की कि जल-शुल्क माफ़ है। तालियाँ बजीं। जुलाई 2023 में मोटर जल गई। रिवाइंडिंग का अनुमान ₹22,000 का था। मरम्मत कोष में ₹1,340 थे। बँधे अनुदान की अगली किस्त अटकी थी, क्योंकि पिछला UC नहीं गया था। पाँच महीने योजना बंद रही। बाद की जाँच में ब्लॉक ने पूछा कि शुल्क माफ़ी का प्रस्ताव किस नियम के तहत पास हुआ और उससे हुई आय की हानि की भरपाई कौन करेगा। उस प्रश्न का लिखित उत्तर फ़ाइल में आज तक नहीं है।*

क़ानून क्या कहता है *जल जीवन मिशन के परिचालन दिशानिर्देश योजना के संचालन और रखरखाव की ज़िम्मेदारी ग्राम पंचायत या उसकी उप-समिति (VWSC) को देते हैं, और उपयोगकर्ता-शुल्क को इसका आधार मानते हैं। शुल्क कितना हो, कौन तय*

करे, माफ़ी किसे मिले, और पैसा किस खाते में रहे, यह आपके राज्य के पंचायती राज अधिनियम, उसके नियमों और राज्य जल नीति से तय होता है। कुछ राज्यों में VWSC का अलग बैंक खाता होता है, कहीं राशि पंचायत की अपनी आय में दर्ज होती है। अपने राज्य का नियम ब्लॉक से लिखित में लीजिए, और शुल्क का प्रस्ताव ग्राम सभा से पास करवाइए। ग्राम सभा का प्रस्ताव ही बाद में आपकी रक्षा करेगा, सरपंच की मौखिक घोषणा नहीं।

एक बात मैं पक्के तौर पर नहीं कह सकता: ₹50 सही रक़म है या नहीं। मैंने ₹30 पर चलती योजनाएँ देखी हैं, जहाँ बिजली सोलर पंप से थी, और ₹100 पर लड़खड़ाती योजनाएँ, जहाँ हिसाब कोई नहीं सुनाता था। रक़म से ज़्यादा फ़र्क़ इस बात से पड़ता है कि देने वाला अपना पैसा जाता हुआ देख सकता है या नहीं।

रामनिवास के गाँव में जनवरी 2023 की पहली तारीख़ को टंकी के नीचे पहली बार हिसाब पढ़ा गया। उस दिन 31 लोग आए, ज़्यादातर औरतें। मार्च में वसूली 140 घरों से बढ़कर 268 हो गई। ऊपर के टोले के सबसे आख़िरी घर ने, जहाँ पहले बीस मिनट पानी आता था, फ़रवरी में अपने तीन महीने का बकाया एक साथ चुकाया, ₹150, सिक्कों में।

वाल्व की चाबी अब कमला बाई के आँगन में नीम के पेड़ पर ठुकी एक कील पर टँगी रहती है। सुबह पौने छह बजे शंकरलाल उसे लेने आते हैं, और जाते-जाते रजिस्टर में समय लिखते हैं।

ODF के बाद: कचरा, गंदा पानी और वह गड्ढा जिसे कोई नहीं भरता

2 अक्टूबर 2019 तक ज़्यादातर गाँवों ने अपने आप को खुले में शौच से मुक्त घोषित कर दिया था। पंचायत भवन की दीवार पर ODF का बोर्ड लगा, फ़ोटो खिंची, और कई सरपंचों ने मान लिया कि सफ़ाई का अध्याय बंद हुआ। अब वह फिर खुल गया है, और इस बार उसका नाम ODF प्लस है। शौचालय गिनने की जगह अब गिनती होती है उन चीज़ों की जो गाँव रोज़ बाहर फेंकता है: रसोई और नहाने का गंदा पानी, प्लास्टिक की थैलियाँ, गोबर, और भरे हुए शौचालयों के गड्ढे।

यह काम शौचालय बनवाने से कठिन है। शौचालय एक बार बनता है। कचरा रोज़ पैदा होता है।

विदिशा ज़िले की एक पंचायत में 2022 में मैं एक प्रशिक्षण के बाद रुक गया था, क्योंकि वहाँ के उपसरपंच मुझे कुछ दिखाना चाहते थे। मुख्य नाली के आख़िरी सिरे पर, स्कूल जाने वाले रास्ते से तीस क़दम दूर, एक सामुदायिक सोख्ता गड्ढा था। पंचायत ने उसे पिछले साल ₹65,000 में बनवाया था, ईंट की दीवार, ऊपर लोहे की जाली, सब नाप के हिसाब से। आठ महीने में वह भर चुका था। ऊपर काली परत, उस पर प्लास्टिक की पन्नियाँ, और किनारे से रिसता पानी जो रास्ते पर फैलकर बच्चों की चप्पलों में चिपकता था। उपसरपंच बोले, 'साहब, बनवाने का पैसा था। साफ़ करवाने का किसी के पास नहीं।'

मैंने पूछा कि गड्ढा साफ़ करना किसकी ज़िम्मेदारी है। सचिव ने सफ़ाईकर्मी का नाम लिया। सफ़ाईकर्मी ने कहा कि उसकी ड्यूटी गलियों में झाड़ू की है, गड्ढे में उतरने की नहीं। सरपंच ने ब्लॉक का नाम लिया। ब्लॉक ने, बाद में, कहा कि परिसंपत्ति पंचायत की है। चारों बातें सही थीं। गड्ढा फिर भी भरा था।

बनाने का बजट और चलाने का बजट दो अलग चीज़ें हैं, और ODF प्लस में ज़्यादातर पंचायतें इसी फ़र्क़ पर फिसलती हैं। सोख्ता गड्ढा, कचरा-शेड, नाडेप खाद-गड्ढा, प्लास्टिक इकट्ठा करने का केंद्र, ये सब GPDP में आसानी से चढ़ जाते हैं, क्योंकि इनका प्राक्कलन बनता है, फ़ोटो आती है और परिसंपत्ति रजिस्टर में एक पंक्ति जुड़ती है। इनकी सफ़ाई और मरम्मत किसी प्राक्कलन में नहीं आती।

पंद्रहवें वित्त आयोग का बँधा अनुदान, जिसका 60 प्रतिशत हिस्सा पेयजल और स्वच्छता से जुड़ा है, ODF स्थिति बनाए रखने और अपशिष्ट प्रबंधन पर ख़र्च हो सकता है। मैंने बहुत कम पंचायतें देखी हैं जो उसमें से हर साल रखरखाव के लिए एक तय रक़म अलग रखती हैं। ज़्यादातर पूरा पैसा नए निर्माण में लगा देती हैं, और फिर पुराने निर्माण को सड़ते देखती हैं।

विदिशा वाले गड्ढे के बाद मैंने अपने प्रशिक्षणों में एक नियम जोड़ा। कोई भी स्वच्छता-परिसंपत्ति GPDP में डालने से पहले उसी प्रस्ताव में चार बातें लिखिए:

1. इसे कौन साफ़ करेगा या चलाएगा (व्यक्ति या समूह का नाम, पद नहीं)।
2. कितने दिन में एक बार (सोख्ता गड्ढे के लिए आमतौर पर साल में दो बार गाद निकालनी पड़ती है, मिट्टी पर निर्भर है)।
3. इसका पैसा किस मद से आएगा, और कितना।
4. सफ़ाई होने की प्रविष्टि किस रजिस्टर में और किसके दस्तख़त से होगी।

अगर चौथे सवाल का जवाब नहीं है, तो बाक़ी तीन भी काग़ज़ पर ही रहेंगे।

कचरा गाड़ी का क़िस्सा भी लगभग यही है। रोहतास की एक पंचायत ने 2021 में ₹1,48,000 की बैटरी वाली कचरा गाड़ी ख़रीदी। उसके लिए चालक का मानदेय तय नहीं हुआ, न घरों से कोई शुल्क। जब मैं 2023 में वहाँ गया, गाड़ी पंचायत भवन के पीछे खड़ी थी, दोनों पिछले टायर बैठे हुए, और उसकी ट्रॉली में किसी ने उपले सुखाने को रख दिए थे। गाड़ी परिसंपत्ति रजिस्टर में पूरी क़ीमत पर दर्ज थी।

इसके उलट, राजगढ़ ज़िले की एक पंचायत में स्वयं सहायता समूह की चार औरतें हर घर से ₹20 महीना लेकर साइकिल-ठेले से कचरा उठाती थीं। गीला कचरा नाडेप गड्ढे में जाता, और उसकी खाद वे ख़ुद ₹6 किलो में बेचती थीं। मुझे नहीं पता यह व्यवस्था अब भी चल रही है या नहीं। पिछली बार जब मैंने फ़ोन किया, समूह की अध्यक्ष ने बताया कि नए सचिव ने अभी तक नाडेप गड्ढे की मरम्मत का प्रस्ताव आगे नहीं भेजा है, और खाद इस बार घर के आँगन में ढेर लगाकर बन रही है।

विदिशा का वह गड्ढा, जहाँ तक मुझे ख़बर है, 2023 की बरसात से पहले एक बार साफ़ हुआ। गाद निकालने वाले मज़दूरों को पैसा उपसरपंच ने अपनी जेब से दिया था, ₹2,400। उसकी कोई रसीद पंचायत की फ़ाइल में नहीं है।

आँगनवाड़ी और स्वास्थ्य केंद्र: निरीक्षण रजिस्टर में दस्तख़त करने से आगे

हर आँगनवाड़ी केंद्र में एक निरीक्षण रजिस्टर होता है। उसमें सुपरवाइज़र, CDPO, कभी-कभी कोई डॉक्टर और अक्सर सरपंच अपनी टिप्पणी लिखते हैं। ज़्यादातर टिप्पणियाँ एक जैसी होती हैं: 'केंद्र खुला मिला, बच्चे उपस्थित, व्यवस्था संतोषजनक।' नीचे दस्तख़त, तारीख़, और कभी-कभी पंचायत की मोहर।

शहडोल ज़िले की एक पंचायत में 2022 में मैंने ऐसा एक रजिस्टर पलटा था। सरपंच के चौदह दस्तख़त थे, अठारह महीनों में। हर बार 'संतोषजनक'। उसी साल अगस्त में ANM ने गाँव के बच्चों की बाँह का घेरा नापने वाले फीते (MUAC टेप) से जाँच की, और नौ बच्चे गंभीर कुपोषण की लाल पट्टी में निकले। आँगनवाड़ी की वज़न मशीन मार्च से ख़राब थी। वृद्धि-चार्ट पर पाँच महीने से कोई नई बिंदी नहीं लगी थी। सरपंच ईमानदार आदमी थे और उन्होंने केंद्र सचमुच देखा था। उन्होंने बस वह नहीं देखा जो देखने लायक़ था।

'बच्चे तो रोज़ आते थे, साहब, दलिया भी बनता था,' उन्होंने मुझसे कहा। उनकी बात ग़लत नहीं थी। दलिया बनता था। वज़न नहीं होता था।

निरीक्षण का मतलब यह देखना है कि केंद्र खुला है या नहीं, यह तो बस शुरुआत है। असली सवाल यह है कि केंद्र अपना काम कर रहा है या नहीं, और उसका सबूत रजिस्टरों में होता है, आपकी आँखों के सामने नहीं। आँगनवाड़ी में आधे घंटे बैठिए और ये पाँच चीज़ें माँगिए:

1. वज़न मशीन। उस पर अपना या किसी बच्चे का वज़न करवाइए। मशीन चलती है या नहीं, एक मिनट में पता चल जाता है।
2. वृद्धि-चार्ट या पोषण ट्रैकर ऐप की पिछली प्रविष्टि की तारीख़।
3. घर ले जाने वाले राशन (टेक होम राशन) का स्टॉक रजिस्टर, और उसी महीने का वितरण रजिस्टर। दोनों का जोड़ मिलाइए।
4. गर्भवती महिलाओं की सूची, और उनमें से कितनी का पहली तिमाही में पंजीकरण हुआ।
5. पिछले ग्राम स्वास्थ्य एवं पोषण दिवस की तारीख़, और उसमें कितने टीके लगे।

इनमें से किसी पर भी आपको आँगनवाड़ी कार्यकर्ता को डाँटने का अधिकार नहीं है। वे महिला एवं बाल विकास विभाग की कर्मचारी हैं, पंचायत की नहीं। पर आप निरीक्षण रजिस्टर में ठीक-ठीक लिख सकते हैं कि क्या मिला, और उसकी एक प्रति CDPO को भेज सकते हैं। 'वज़न मशीन मार्च 2022 से बंद, बदलवाने की माँग' जैसी एक पंक्ति चौदह 'संतोषजनक' से ज़्यादा काम करती है, क्योंकि उस पर किसी को जवाब देना पड़ता है।

उप-स्वास्थ्य केंद्र पर भी यही बात लागू है। अधिकतर राज्यों में ग्राम स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं पोषण समिति (VHSNC) होती है, जिसकी अध्यक्षता अक्सर कोई पंच या सरपंच करते हैं और सचिव आशा होती हैं। समिति के खाते में हर साल एक छोटी अबंधित राशि आती है। संरचना और रक़म राज्य के दिशानिर्देशों से तय होती हैं, इसलिए अपने ज़िले के स्वास्थ्य विभाग से लिखित में पूछ लीजिए। मैंने ऐसी समितियाँ देखी हैं जिनका पैसा तीन साल से खाते में पड़ा था, क्योंकि किसी को पता नहीं था कि उस पर दस्तख़त किसे करने हैं।

मैं मानता हूँ कि मेरी राय यहाँ बदली है। शुरुआती सालों में मैं सरपंचों से कहता था कि आँगनवाड़ी और स्वास्थ्य विभाग का मामला है, आप सड़क और पानी पर ध्यान दीजिए, वरना दो नावों में पैर रहेगा। शहडोल के उन नौ बच्चों के बाद मैंने वह कहना छोड़ दिया। गाँव के बच्चों का वज़न किसी विभाग की फ़ाइल में कम होता है, पर उसका असर पंचायत की गलियों में दिखता है।

इसी पंचायत के रजिस्टर में एक और बात थी जो मुझे तब समझ नहीं आई थी। चौदह दस्तख़तों में से ग्यारह एक ही लिखावट में थे, तिरछे और तेज़। बाक़ी तीन अलग थे, धीमे, अक्षर जोड़-जोड़कर लिखे हुए। मैंने आँगनवाड़ी कार्यकर्ता से पूछा कि सरपंच कौन हैं।

उन्होंने रजिस्टर बंद किया और बोलीं, 'सरपंच तो बाई सा हैं। आते भैया जी हैं।'

अध्याय 10

कुर्सी किसकी है

सरपंच-पति: एक आदत जिसके पीछे क़ानूनी जोखिम छिपा है

पंचायत भवन में हत्थे वाली कुर्सी आम तौर पर एक ही होती है। शहडोल की उस पंचायत में भी एक ही थी, और उस पर बैठने वाले का नाम किसी रजिस्टर में नहीं था। ग्यारह दस्तख़त उन्हीं के थे, तिरछे और तेज़। पर निरीक्षण-पंजी के ऊपर छपा पद था 'सरपंच', और उस पद पर चुनी गई थीं वे औरत जिनके तीन धीमे, जोड़-जोड़कर लिखे दस्तख़त उसी पन्ने पर दबे पड़े थे।

गाँव में इसे कोई अपराध नहीं मानता। इसे 'व्यवस्था' कहते हैं। सीट महिला के लिए आरक्षित हुई, पति पिछली बार चुनाव हार गए थे या लड़ ही नहीं सकते थे, तो पत्नी का नाम पर्चे पर गया और काम घर के 'अनुभवी' आदमी ने सँभाल लिया। मैंने बीस साल में शायद सौ से ज़्यादा ऐसी पंचायतों में प्रशिक्षण दिया है जहाँ प्रशिक्षण-हॉल में बैठे आदमी ने अपना परिचय 'एसपी साहब' कहकर दिया। एसपी, यानी सरपंच-पति। सरकारी तंत्र ने इस शब्द को इतना अपना लिया है कि कुछ ब्लॉकों के वॉट्सऐप समूहों में सूची ही 'सरपंच/प्रतिनिधि' के नाम से बनती है। क़ानून में 'प्रतिनिधि' नाम का कोई पद नहीं है।

यहीं से जोखिम शुरू होता है, और वह जोखिम पति का कम, पत्नी का ज़्यादा है। **क़ानून की नज़र में पंचायत का हर फ़ैसला, हर चेक, हर DSC से हुआ भुगतान उस व्यक्ति का है जो चुना गया।** पति ने दस्तख़त किए हों तो वह जालसाज़ी का मामला बन सकता है। पत्नी ने बिना पढ़े किए हों तो लापरवाही का। दोनों सूरतों में वसूली का नोटिस एक ही पते पर जाता है।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *2020 में रीवा ज़िले की एक पंचायत में खेत-तालाब का भुगतान ₹2,60,000 का हुआ। माप पुस्तिका पर सरपंच के नाम से दस्तख़त थे, जो असल में उनके पति ने किए थे, 'बाई सा को खेत पर जाना था' कहकर। जाँच में तालाब नाप से एक-तिहाई छोटा निकला। वसूली नोटिस सरपंच के नाम आया। उन्होंने लिखित बयान दिया कि दस्तख़त उनके नहीं हैं। जाँच अधिकारी ने पूछा, 'तो फिर भुगतान आपके DSC से कैसे हुआ?' टोकन घर की अलमारी में रहता था और पिन पति को याद था।*

बयान ने उन्हें बचाया नहीं, उलटे पति पर अलग मामला खुल गया। वसूली अब भी उन्हीं के नाम पर दर्ज है।

क़ानून क्या कहता है: किसी चुने हुए प्रतिनिधि की जगह कोई और उसके अधिकार का इस्तेमाल करे, इसकी कोई गुंजाइश राज्य पंचायती राज अधिनियमों में नहीं है। कई राज्यों ने परिपत्र जारी करके रिश्तेदारों के बैठकों में बैठने या सरकारी बैठकों में 'प्रतिनिधि' भेजने पर रोक लगाई है, और कुछ जगह कलेक्टरों ने ऐसी शिकायतों पर कार्यवाही भी की है। पर इन परिपत्रों की भाषा और सज़ा राज्य-दर-राज्य अलग है, इसलिए अपने राज्य का अधिनियम और पिछले पाँच साल के परिपत्र ब्लॉक से लिखित में माँगिए। एक बात हर जगह एक-सी है: पद के दुरुपयोग या कर्तव्य में लापरवाही को लगभग हर राज्य अधिनियम हटाने का आधार मानता है, और दूसरे को अपना काम सौंप देना दोनों में गिना जा सकता है।

मैं यह नहीं कहता कि हर घर में पति की भूमिका बुरी है। मैंने ऐसे पति भी देखे हैं जो पहले साल बैठक तक साथ आते थे, बाहर बेंच पर बैठते थे, और तीसरे साल तक बस मोटरसाइकिल पर छोड़ने आते थे। सलाह देना, साथ चलना, बैंक तक जाना, यह सब घर की बात है। मुश्किल वहाँ है जहाँ सलाह धीरे-धीरे दस्तख़त बन जाती है। सच कहूँ तो मुझे आज तक पक्का नहीं पता कि वह रेखा ठीक किस दिन पार होती है। शायद उस दिन, जब सचिव फ़ाइल लेकर घर आते हैं और दरवाज़ा पति खोलते हैं, और फ़ाइल उन्हीं के हाथ में रह जाती है।

शहडोल की उस सरपंच से मैं अगले हफ़्ते उनके घर पर मिला। आँगन में बैठीं, घूँघट थोड़ा सरकाया, और मेरे सवाल का जवाब देने से पहले रसोई की तरफ़ देखा। अंदर से आवाज़ आई, 'बता दो, जो पूछ रहे हैं।' उन्होंने बताया कि DSC का टोकन उन्होंने कभी हाथ में नहीं लिया। पिन उन्हें मालूम नहीं था।

आरक्षित सीट, असुरक्षित सरपंच: दबाव पहचानना और सुरक्षा माँगना

महिला सरपंच के घर में कुर्सी छिनती है तो अक्सर रसोई की तरफ़ से छिनती है। दलित या आदिवासी सरपंच की कुर्सी बाहर से छिनती है, और कई बार सचमुच छिनती है।

2018 में दमोह ज़िले की एक पंचायत में अनुसूचित जाति की आरक्षित सीट से चुने गए सरपंच प्रकाश अहिरवार (नाम बदला हुआ) से मैं ब्लॉक के प्रशिक्षण में मिला था। वे पीछे की पंक्ति में बैठे थे, और चाय के समय भी उठे नहीं। बाद में उन्होंने बताया कि पंचायत भवन में उनके लिए अलग प्लास्टिक की कुर्सी रखी जाती है, और हत्थे वाली कुर्सी पर उपसरपंच बैठते हैं, 'क्योंकि वो पहले से बैठते आए हैं।' 15 अगस्त को झंडा भी उपसरपंच ने फहराया। प्रकाश जी बोले, 'साहब, झंडा कौन फहराए, इसके लिए झगड़ा करूँ तो नाली का काम रुक जाएगा।' मैंने पूछा, नाली का काम अभी चल रहा है क्या। वे चुप रहे। नाली का प्राक्कलन सात महीने से उपसरपंच की अलमारी में था।

यही दबाव की असली शक्ल है। मारपीट कम होती है, अपमान रोज़ होता है, और सबसे ज़्यादा होती है **धीमी बेदख़ली**, जिसमें सरपंच पद पर रहता है पर फ़ैसलों से बाहर कर दिया जाता है।

दबाव के संकेत, जो मैंने बार-बार देखे हैं:

- बैठक की सूचना सरपंच तक बैठक वाले दिन पहुँचती है, या पहुँचती ही नहीं।
- सचिव फ़ाइलें किसी और के घर ले जाते हैं, और सरपंच से केवल दस्तख़त करवाने आते हैं।
- कार्यवाही-रजिस्टर में सरपंच की उपस्थिति दर्ज होती है, पर प्रस्ताव कोई और 'रखता' है।
- सरपंच को सार्वजनिक कार्यक्रम में मंच के नीचे बैठाया जाता है, या झंडा फहराने से रोका जाता है।
- निर्माण-कार्य किसी एक परिवार के ट्रैक्टर और एक ही ठेकेदार से होते हैं, और सरपंच को पता बाद में चलता है।

सबसे ख़तरनाक बात यह है कि इन सब कामों की क़ानूनी ज़िम्मेदारी फिर भी सरपंच की रहती है। जिस फ़ाइल पर आपका नियंत्रण नहीं, उसका वसूली नोटिस आपके नाम आएगा।

क़ानून क्या कहता है: अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 में 2015 के संशोधन के बाद, किसी अनुसूचित जाति या जनजाति के निर्वाचित पंचायत प्रतिनिधि को डराना, धमकाना या उसके सामान्य कर्तव्य निभाने से रोकना अपराध है। इसका मतलब यह है कि उपसरपंच का झंडा फहराना एक शिष्टाचार की गड़बड़ी भर नहीं है, शिकायत होने पर उसकी जाँच इस अधिनियम में हो सकती है। झंडारोहण का अधिकार किसका है, यह राज्य सरकार के निर्देश तय करते हैं, इसलिए अपने ज़िले का 15 अगस्त और 26 जनवरी का परिपत्र लिखित में रखिए। PESA वाले क्षेत्रों में आदिवासी सरपंच और ग्राम सभा के अधिकार राज्य के PESA नियमों से तय होंगे, और कई राज्यों में ये नियम बहुत देर से बने हैं।

सुरक्षा माँगने का तरीक़ा भी काग़ज़ से शुरू होता है, ग़ुस्से से नहीं:

1. हर घटना की तारीख़, जगह, मौजूद लोग और बोले गए शब्द एक अलग कॉपी में उसी दिन लिखिए।
2. बैठक की सूचना न मिले तो सचिव को लिखित में पूछिए, और पावती लीजिए।
3. पहली शिकायत BDO और कलेक्टर को एक साथ दीजिए, प्रतिलिपि पुलिस अधीक्षक को।
4. धमकी हो तो थाने में लिखित आवेदन दीजिए; FIR न लिखी जाए तो वही आवेदन रजिस्टर्ड डाक से पुलिस अधीक्षक को भेजिए।
5. अपने राज्य के अनुसूचित जाति या जनजाति आयोग का पता और ज़िले के सामाजिक न्याय अधिकारी का नंबर पहले से रखिए।

मैं ईमानदारी से कहूँ तो इन सब रास्तों का नतीजा हमेशा अच्छा नहीं निकलता। मैंने ऐसे मामले देखे हैं जहाँ शिकायत के बाद गाँव में सरपंच का अकेलापन और बढ़ा। प्रकाश जी को मैंने यही सलाह दी थी, और लगभग एक साल तक मुझे लगता रहा कि शायद ग़लत दी।

अगली 26 जनवरी को उन्होंने कलेक्टर के परिपत्र की फ़ोटोकॉपी सचिव को एक दिन पहले थमा दी, पावती लेकर। सुबह जब वे भवन पहुँचे तो हत्थे वाली कुर्सी बरामदे में रखी थी, ख़ाली। उपसरपंच नहीं आए थे। झंडे की रस्सी प्रकाश जी के हाथ में थी, और सामने केवल ग्यारह लोग खड़े थे।

गुट, विपक्ष और विधायक: विरोधी वार्ड पंच को बैठक में साथ रखने के तरीक़े

हर पंचायत में कम से कम दो गुट होते हैं: एक जो चुनाव जीता, और एक जो हारकर भी वार्डों में बैठा है। नए सरपंच अक्सर मान लेते हैं कि हारे हुए गुट को किनारे कर देना ही जीत का इनाम है। यह सबसे महँगी ग़लती है, क्योंकि पंचायत के ज़्यादातर प्रस्ताव बहुमत से पास होते हैं, और बहुमत वार्ड पंचों का होता है, आपका नहीं।

2021 में करौली ज़िले की एक पंचायत में सरपंच रमेश मीणा (नाम बदला हुआ) के ग्यारह वार्डों में से छह पर विरोधी गुट के पंच जीते थे। पहली तीन बैठकें कोरम के अभाव में स्थगित हुईं। छह पंच आते ही नहीं थे। चौथी बैठक में आए, तो ₹2,40,000 की सीसी सड़क का प्रस्ताव गिरा दिया, जबकि वह सड़क उन्हीं के वार्ड से होकर जाती थी। विरोधी गुट के अगुआ हरिसिंह ने बैठक के बाद मुझसे कहा, 'चौधरी जी, सड़क हमें भी चाहिए। पर फ़ीता वो काटें, ये नहीं होने देंगे।'

यह वाक्य मैं कई बार याद करता हूँ। झगड़ा सड़क पर था ही नहीं। झगड़ा श्रेय पर था, और इज़्ज़त पर। ऐसे में क़ानून आपकी बहुत मदद नहीं करता, पर कुछ तरीक़े काम आते हैं जो मैंने अलग-अलग ज़िलों में आज़माते देखे हैं:

1. **एजेंडा पहले, लिखित में, सबको।** बैठक की सूचना के साथ प्रस्तावों की सूची और अनुमानित राशि हर वार्ड पंच को भेजिए, पावती के साथ। विरोधी पंच को बैठक में पहली बार पता चले कि क्या पास होना है, तो वह विरोध ही करेगा। सूचना कितने दिन पहले देनी है, यह आपके राज्य का अधिनियम या नियम तय करेगा।
2. **आपत्ति को उनके शब्दों में दर्ज कीजिए।** कार्यवाही-रजिस्टर में 'कुछ सदस्यों ने असहमति जताई' मत लिखवाइए। लिखवाइए, 'वार्ड 7 के पंच हरिसिंह ने कहा कि नाली का ढलान ग़लत है।' जिसकी बात रजिस्टर में नाम से दर्ज होती है, वह अगली बैठक में आता है।
3. **स्थायी समितियों में जगह दीजिए।** निर्माण या जल समिति की अध्यक्षता विरोधी गुट के किसी समझदार पंच को देना डरावना लगता है। पर जो आदमी काम का निरीक्षण करेगा, वह उसी काम को बैठक में नहीं गिराएगा।

4. **स्थल पर साथ चलिए।** प्रस्ताव से पहले उस वार्ड के पंच के साथ पैदल मौक़ा देखिए। JEN को बुलाइए तो उस पंच को भी।
5. **श्रेय बाँटिए, सार्वजनिक रूप से।** शिलापट्ट पर नाम किसका होगा, यह ज़्यादातर राज्यों में नियम से तय है, पर ग्राम सभा में धन्यवाद किसका दिया जाए, यह आपके हाथ में है।

रमेश जी ने पाँचवीं बैठक से पहले हरिसिंह को निर्माण समिति का अध्यक्ष प्रस्तावित किया। उनके अपने गुट के दो पंच नाराज़ हुए। सड़क का प्रस्ताव दोबारा आया, इस बार हरिसिंह ने रखा, और नौ मतों से पास हुआ। मैं यह दावा नहीं करूँगा कि इसके बाद सब ठीक हो गया। अगले साल पेंशन सूची पर फिर झगड़ा हुआ, और एक बैठक में कुर्सियाँ भी उठीं। गुट ख़त्म नहीं होते। उन्हें बस बैठक के भीतर रखना पड़ता है, बाहर नहीं।

विधायक और उनके 'प्रतिनिधि' एक अलग मुसीबत हैं। विधायक निधि से गाँव में काम आता है, और बदले में अक्सर यह उम्मीद आती है कि विधायक जी का कोई आदमी पंचायत की बैठक में बैठेगा, या लाभार्थी सूची 'देख' लेगा। पंचायत की बैठक में मत देने का अधिकार केवल निर्वाचित सदस्यों का है, और किसे आमंत्रित सदस्य माना जाए, यह राज्य का अधिनियम बताता है। प्रतिनिधि को चाय पिलाइए, बरामदे में बैठाइए, पर रजिस्टर पर उनकी कुर्सी मत लगने दीजिए। विधायक से रिश्ता अच्छा रखिए और लिखित रखिए: जो काम विधायक निधि से माँगना हो, उसका प्रस्ताव ग्राम सभा या पंचायत से पास करवाकर, प्रतिलिपि लगाकर भेजिए। तब काम विधायक जी का भी होता है और पंचायत का भी, और लाभार्थी चुनने का सवाल उनके दरबार तक नहीं पहुँचता।

मेरी राय यहाँ पहले कुछ और थी। दस साल पहले मैं सरपंचों से कहता था कि विधायक से दूरी रखिए। अब नहीं कहता। दूरी रखने वाले सरपंच की फ़ाइलें ज़िले में सबसे नीचे दबती हैं, यह मैंने बाराँ से लेकर सीहोर तक देखा है।

करौली में सड़क बनी, और उद्घाटन के दिन फ़ीता काटने के लिए विधायक जी आए। रमेश जी और हरिसिंह दोनों उनके दाएँ-बाएँ खड़े थे। कैंची किसके हाथ में थी, फ़ोटो में साफ़ नहीं दिखता।

ज़मीन: जहाँ पंचायत की लाठी छोटी पड़ती है

गाँव की सबसे पुरानी लड़ाइयाँ ज़मीन की होती हैं, और सरपंच से सबसे ज़्यादा उम्मीद भी इन्हीं में की जाती है। चरागाह पर किसी ने बाड़ खींच ली, तालाब के पेटे में गेहूँ बो दिया गया, श्मशान का रास्ता किसी के बाड़े में चला गया। लोग पंचायत भवन आते हैं और कहते हैं, 'सरपंच जी, आप तो कुर्सी पर हो, हटवाओ।' यहीं ज़्यादातर सरपंच अपनी सीमा भूल जाते हैं।

2020 में चूरू ज़िले की एक पंचायत में सरपंच महावीर (नाम बदला हुआ) ने गोचर की लगभग दो बीघा ज़मीन पर बनी पक्की चारदीवारी पंचायत के ख़र्च पर JCB बुलाकर गिरवा दी। JCB का किराया ₹6,500 था। गाँव ने तालियाँ बजाईं। तीन हफ़्ते बाद क़ब्ज़ेदार ने सरपंच के

ख़िलाफ़ थाने में रिपोर्ट दी और सिविल अदालत में दावा किया। चारदीवारी फिर खड़ी हो गई, क्योंकि बेदख़ली का कोई आदेश था ही नहीं।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *गोचर राजस्व रिकॉर्ड की ज़मीन थी, पंचायत की नहीं। बेदख़ली का अधिकार तहसीलदार का था। अगले ऑडिट में JCB के ₹6,500 पर आपत्ति लगी: 'पंचायत निधि का अनधिकृत व्यय।' महावीर जी ने वह राशि अपनी जेब से जमा की। अदालत का मामला उनके कार्यकाल के बाद भी चलता रहा।*

पहला सवाल हमेशा यह होना चाहिए: **ज़मीन किसके रिकॉर्ड में है?** ज़्यादातर हिंदी-भाषी राज्यों में चरागाह, तालाब, नदी-नाले और रास्ते राजस्व विभाग के रिकॉर्ड में दर्ज होते हैं। पंचायत उनकी देखरेख करती है, मालिक नहीं होती। आबादी क्षेत्र की कुछ ज़मीन, सामुदायिक भवन का परिसर या पंचायत को हस्तांतरित भूखंड ज़रूर पंचायत के नियंत्रण में हो सकते हैं। फ़र्क़ जमाबंदी या खसरे की एक पंक्ति से तय होता है, गाँव की याददाश्त से नहीं।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *राजस्थान में सरकारी ज़मीन पर अनधिकृत क़ब्ज़े की बेदख़ली भू-राजस्व अधिनियम, 1956 की धारा 91 के तहत तहसीलदार करता है। दूसरे राज्यों में धारा और अधिकारी अलग हैं, इसलिए अपने राज्य का भू-राजस्व क़ानून और पंचायती राज अधिनियम देखिए। सुप्रीम कोर्ट ने जनवरी 2011 में जगपाल सिंह बनाम पंजाब राज्य मामले में राज्यों को ग्राम सभा और सामुदायिक ज़मीनों से अतिक्रमण हटाने की योजना बनाने को कहा था। यह फ़ैसला आपके आवेदन में उद्धृत करने लायक़ है, पर यह आपको ख़ुद बुलडोज़र चलाने का अधिकार नहीं देता।*

तो पंचायत करती क्या है? बहुत कुछ, बस काग़ज़ पर:

1. पटवारी से हर सामुदायिक ज़मीन का खसरा नंबर, रक़बा और नक़्शा लिखित में लीजिए, और परिसंपत्ति रजिस्टर में अलग पन्ने पर दर्ज कीजिए।
2. अतिक्रमण दिखे तो मौक़े की तारीख़वार फ़ोटो लीजिए, जियो-टैग के साथ।
3. पंचायत बैठक या ग्राम सभा में प्रस्ताव पास करवाइए: खसरा नंबर, अनुमानित रक़बा, क़ब्ज़ेदार का नाम।
4. वह प्रस्ताव तहसीलदार को आवेदन के साथ भेजिए, प्रतिलिपि SDM को, और पावती रखिए।
5. हर तीस दिन पर लिखित स्मरण-पत्र। जवाब न आए तो सूचना के अधिकार में आवेदन की स्थिति पूछिए।

यह धीमा है। मैं जानता हूँ। मैंने ऐसे आवेदन भी देखे हैं जो चार साल तहसील की अलमारी में पड़े रहे, और ईमानदारी से कहूँ तो मुझे नहीं पता कि उनमें से कितने कभी खुलेंगे। पर जिस सरपंच ने

यह रास्ता अपनाया, उस पर कोई FIR नहीं हुई, कोई वसूली नहीं बनी, और अगले सरपंच को पूरी फ़ाइल मिली, जिसे वह वहीं से आगे बढ़ा सका।

एक और जाल है जिससे बचिए: **पंचायत का काम क़ब्ज़े को पक्का करने में इस्तेमाल न हो।** अतिक्रमण वाली ज़मीन तक सीसी सड़क, बिजली का खंभा या हैंडपंप लगवा देना बाद में क़ब्ज़ेदार का सबसे बड़ा सबूत बन जाता है: 'सरकार ने ख़ुद सड़क बनाई, तो ज़मीन मेरी।' नागौर में चरागाह-पट्टे वाला प्रस्ताव इसी तरह पैदा हुआ था।

महावीर जी ने अपने चौथे साल में यही रास्ता अपनाया। तालाब के पेटे में खेती करने वाले तीन परिवारों के खसरा नंबर तहसील भेजे, प्रस्ताव की प्रति के साथ। नोटिस जारी हुआ। उसके नौ दिन बाद पंचायत भवन में एक लिफ़ाफ़ा आया। एक क़ब्ज़ेदार के बेटे ने सूचना के अधिकार में पिछले तीन साल की कैश बुक, सारे मस्टर रोल और JCB वाले भुगतान की पूरी फ़ाइल की प्रतियाँ माँगी थीं।

सचिव ने लिफ़ाफ़ा मेज़ पर रखा और बोले, 'सरपंच जी, तीस दिन हैं।'

अध्याय 11

हिसाब देने का साहस

नीली फ़ाइल

महावीर जी ने लिफ़ाफ़ा दो बार पढ़ा, चश्मा उतारा, और अलमारी की दूसरी शेल्फ़ से एक नीली फ़ाइल निकाली। उस पर मोटे अक्षरों में लिखा था: 'सामाजिक अंकेक्षण, अगस्त 2023'। भीतर पिछले दो साल के मस्टर रोल की प्रतियाँ थीं, हर पन्ने पर ग्राम सभा की मुहर और यह टिप्पणी कि यह पन्ना सभा में पढ़कर सुनाया गया। JCB वाला भुगतान भी उसी फ़ाइल में था, बिल, कार्यादेश और प्रस्ताव की प्रति के साथ।

'तीस दिन नहीं लगेंगे,' उन्होंने सचिव से कहा। 'ये तो पहले ही तीन सौ लोगों के सामने पढ़ा जा चुका है।'

उन्नीसवें दिन 412 पन्नों की प्रतियाँ आवेदक के घर पहुँचीं। ₹2 प्रति पन्ने के हिसाब से शुल्क ₹824 बना, जिसकी रसीद कैश बुक में चढ़ी। उसके बाद उस परिवार ने कोई दूसरा आवेदन नहीं भेजा। मैं यह दावा नहीं करता कि उन्होंने हार मान ली। शायद उन्हें वह नहीं मिला जो वे ढूँढ रहे थे, क्योंकि जो चीज़ पहले ही चौपाल पर पढ़ी जा चुकी हो, उसमें छिपा हुआ कुछ बचता नहीं।

ज़्यादातर सरपंच सामाजिक अंकेक्षण से डरते हैं। मैं समझता हूँ क्यों। एक बाहरी टीम आती है, गाँव के लोगों के सामने आपके किए हर भुगतान का नाम-दर-नाम हिसाब पढ़ा जाता है, और कोई भी खड़ा होकर कह सकता है कि यह ग़लत है। बीस साल पहले मैं भी इसे एक तरह की सार्वजनिक पेशी मानता था। अब नहीं मानता। **जिस फ़ाइल को ग्राम सभा ने सुन लिया, उस पर बाद में कोई नया आरोप टिकाना बहुत कठिन हो जाता है।** अंकेक्षण में उठी आपत्ति वहीं दर्ज होती है, वहीं जवाब माँगा जाता है, और जवाब भी उसी रिपोर्ट में चढ़ता है। तीन साल बाद कोई विरोधी वही बात उठाए, तो आपके पास तारीख़, सभा और कार्यवाही होती है।

डूँगरपुर की वह दोपहर

2016 में डूँगरपुर ज़िले की एक पंचायत में मैं अंकेक्षण की ग्राम सभा के पीछे दरी पर बैठा था। ग्राम संसाधन व्यक्ति (गाँव से चुना गया वह व्यक्ति जो अंकेक्षण टीम के साथ घर-घर जाकर जाँच करता है) तालाब-गहरीकरण के मस्टर रोल से नाम पढ़ रहा था। चौंतीसवें नाम पर एक अधेड़ औरत खड़ी हो गई।

'ये मेरी सास का नाम है। वो तो दो साल पहले गुज़र गईं।'

सभा में सन्नाटा हुआ। मस्टर रोल में उस नाम के आगे बारह दिन की मज़दूरी, ₹2,184, दर्ज थी। सरपंच का चेहरा मुझे आज भी याद है, क्योंकि उस पर घबराहट नहीं थी। उन्होंने सचिव से कहा, 'मेट वाला रजिस्टर लाओ।' मेट की हाज़िरी-पंजी में उस नाम के आगे बारहों दिन ख़ाली थे, और हाशिये पर सरपंच की अपनी लिखावट में एक टिप्पणी थी, तारीख़ के साथ: 'मस्टर रोल से मिलान नहीं, जाँच हो।' वह टिप्पणी उन्होंने भुगतान से पहले लिखी थी और प्रतिलिपि ब्लॉक को भेजी थी, जहाँ वह किसी फ़ाइल में दब गई।

वसूली मेट से हुई। सरपंच का नाम रिपोर्ट में शिकायतकर्ता के रूप में दर्ज हुआ, आरोपी के रूप में नहीं।

अब ईमानदारी से कहूँ तो मुझे पक्का नहीं पता कि वह टिप्पणी न होती तो क्या होता। शायद सभा तब भी सरपंच की बात मान लेती। शायद नहीं। पर इतना मैंने बार-बार देखा है कि अंकेक्षण में जो सरपंच अपनी ही चूक पहले खोलकर रख देता है, उसके साथ गाँव का बर्ताव अलग होता है।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम, 2005 की धारा 17 के तहत ग्राम सभा को पंचायत में हुए सभी मनरेगा कामों का नियमित सामाजिक अंकेक्षण करना है। केंद्र के योजना लेखा-परीक्षा नियम, 2011 के अनुसार यह हर छह महीने में कम से कम एक बार होना चाहिए, और इसे राज्य की स्वतंत्र सामाजिक अंकेक्षण इकाई करवाती है, पंचायत नहीं। कई राज्यों ने 15वें वित्त आयोग, आवास और पोषण योजनाओं तक भी अंकेक्षण बढ़ाया है, पर कहाँ तक, यह आपके राज्य के आदेश से तय होगा। अपने ब्लॉक से अंकेक्षण कैलेंडर लिखित में माँगिए।*

अंकेक्षण टीम के आने से पहले सचिव अक्सर कहते हैं, 'सरपंच जी, कुछ रजिस्टर बाद में दिखा देंगे।' यह वाक्य सुनते ही अलमारी की चाबी अपने हाथ में ले लीजिए। टीम को सात दिन पहले, गिनकर और पावती लेकर, यह सब सौंपिए:

1. काम-वार फ़ाइलें: प्रस्ताव, प्राक्कलन, स्वीकृतियाँ, कार्यादेश।
2. मस्टर रोल और मेट की हाज़िरी-पंजी, दोनों।
3. माप पुस्तिका की प्रतियाँ।
4. सामग्री के बिल, कोटेशन और स्टॉक रजिस्टर के संबंधित पन्ने।

5. भुगतान का PFMS विवरण और बैंक स्टेटमेंट।
6. पिछले अंकेक्षण की रिपोर्ट और उस पर हुई कार्रवाई का ब्योरा।

महावीर जी की नीली फ़ाइल में यह छठा काग़ज़ सबसे ऊपर लगा था। उसमें पिछली बार की चार आपत्तियाँ थीं, और हर एक के आगे लाल स्याही में एक शब्द: 'निपटी'। चौथी के आगे वह शब्द नहीं था। वहाँ बस एक तारीख़ थी, और उसके नीचे ख़ाली जगह।

तीस दिन वाला रजिस्टर

चूरू वाला आवेदन उन्नीसवें दिन इसलिए निपटा क्योंकि महावीर जी के पास फ़ाइल तैयार थी। पर फ़ाइल से पहले एक और चीज़ थी, जिसे ज़्यादातर पंचायतों में कोई नहीं रखता: सूचना के अधिकार के आवेदनों का अलग रजिस्टर। लाल जिल्द, ₹60 का, तहसील के सामने वाली स्टेशनरी से ख़रीदा हुआ। उसमें हर आवेदन जिस दिन आता, उसी दिन चढ़ता था।

2020 में मुरैना ज़िले की एक पंचायत का क़िस्सा मुझे एक प्रशिक्षण में वहीं के एक वार्ड पंच ने सुनाया था। गाँव के एक लड़के ने, जो ग्वालियर में कोचिंग करता था, 15वें वित्त आयोग के दो साल के ख़र्च की सूची माँगी। ₹10 का पोस्टल ऑर्डर लगाकर, रजिस्टर्ड डाक से। सचिव ने लिफ़ाफ़ा खोला, पढ़ा और दराज़ में रख दिया। सरपंच से बोले, 'भैया जी, ये लड़का पढ़ाई छोड़कर राजनीति कर रहा है। जवाब देंगे तो और माँगेगा।'

सैंतालीसवें दिन लड़के ने जनपद में पहली अपील डाली। अपील अधिकारी ने पंद्रह दिन में सूचना देने का आदेश दिया, और साथ में यह भी लिखा कि समय-सीमा बीत चुकी है, इसलिए प्रतियाँ **मुफ़्त** दी जाएँगी। 260 पन्ने। फ़ोटोकॉपी का ₹520 पंचायत की जेब से गया, जो कोई बड़ी रक़म नहीं। बड़ी बात यह थी कि लड़का इसके बाद भी राज्य सूचना आयोग गया, और आयोग की सुनवाई में सचिव के साथ सरपंच को भी भोपाल बुलाया गया। दो बार। बस का किराया, एक रात धर्मशाला, और गाँव में यह चर्चा कि 'सरपंच जी पर केस चल रहा है।' जिस ख़र्च-सूची को छिपाया गया, उसमें, वार्ड पंच के शब्दों में, 'कुछ भी गड़बड़ नहीं थी, बस हैंडपंप और नाली थे।'

> ***क़ानून क्या कहता है*** *सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 7(1) के तहत लोक सूचना अधिकारी को आवेदन मिलने के **30 दिन** के भीतर सूचना देनी या लिखित कारण सहित अस्वीकार करनी होती है। मामला किसी के जीवन या स्वतंत्रता से जुड़ा हो तो 48 घंटे। धारा 7(6) कहती है कि समय-सीमा चूकने पर सूचना मुफ़्त देनी पड़ेगी। धारा 20 में देरी पर ₹250 प्रतिदिन, अधिकतम ₹25,000 तक के दंड का प्रावधान है, जो लोक सूचना अधिकारी पर लगता है। आवेदन शुल्क, प्रति पन्ना शुल्क और पंचायत में लोक सूचना अधिकारी कौन होगा (सचिव, ग्राम विकास अधिकारी या कोई*

और), यह राज्य के नियम तय करते हैं। अपनी पंचायत का आदेश देखकर उसकी प्रति नोटिस बोर्ड पर लगवाइए।

दंड सचिव पर लगता है, यह सुनकर कई सरपंच राहत की साँस लेते हैं। मत लीजिए। मुरैना के सरपंच पर एक रुपये का दंड नहीं लगा, फिर भी उनके दो साल ख़राब हुए। और गाँव यह नहीं पूछता कि क़ानून में PIO कौन है। गाँव पूछता है कि सरपंच ने जवाब क्यों नहीं दिया।

मेरी सलाह सीधी है। RTI रजिस्टर को आप अपना रजिस्टर मानिए, सचिव का नहीं। उसके कॉलम ये रखिए:

1. क्रमांक और आवेदन मिलने की तारीख़।
2. आवेदक का नाम, पता और शुल्क की रसीद संख्या।
3. माँगी गई सूचना, एक पंक्ति में।
4. **अंतिम तारीख़** (मिलने की तारीख़ + 30 दिन), लाल स्याही में।
5. किस रजिस्टर या फ़ाइल से सूचना निकलेगी।
6. जवाब भेजने की तारीख़, पन्नों की संख्या, डाक रसीद।
7. पहली अपील हुई या नहीं।

हर सोमवार की बैठक में चौथा कॉलम देखिए। बस इतना।

अब एक बात जिस पर मेरी राय बदली है। पहले मैं सरपंचों से कहता था कि आवेदन सिर्फ़ उतना ही जवाब दीजिए जितना पूछा गया है, उससे एक पन्ना ज़्यादा नहीं। अब मैं इतना पक्का नहीं हूँ। बालोतरा के पास एक सरपंच ने 2022 में हर तिमाही का ख़र्च पंचायत भवन की दीवार पर और ग्राम पंचायत के वॉट्सऐप समूह में डालना शुरू किया। धारा 4 यही कहती है, कि सूचना बिना माँगे सार्वजनिक की जाए, पर उसे पढ़ता कौन है। उनके यहाँ RTI आवेदन साल में नौ से घटकर दो रह गए। हो सकता है यह संयोग हो। हो सकता है लोगों ने पूछना छोड़ दिया हो क्योंकि अब पूछने को कुछ बचा नहीं।

महावीर जी के लाल रजिस्टर में चूरू वाला आवेदन क्रमांक 7 पर था। उसके नीचे क्रमांक 8 की पंक्ति ख़ाली थी, बस तारीख़ भरी थी, और चौथे कॉलम में लाल स्याही से लिखा था: 14 मार्च।

पहला लिफ़ाफ़ा

कमीशन की बात कोई सीधे नहीं करता। 2016 में शाजापुर ज़िले की एक पंचायत में नए सरपंच दिनेश के पहले काम का भुगतान हुआ: ₹3,10,000 की सीसी सड़क, 210 मीटर, स्कूल से बस स्टैंड तक। भुगतान के तीसरे दिन ठेकेदार पंचायत भवन आए, चाय पी, मौसम की बात की,

और जाते-जाते मेज़ पर एक लिफ़ाफ़ा छोड़ गए। बोले, 'सरपंच साहब, ये बच्चों की मिठाई के लिए। सब जगह चलता है।' लिफ़ाफ़े में ₹6,000 थे। दो प्रतिशत से भी कम।

दिनेश ने मुझे यह क़िस्सा 2021 में सुनाया, जब उनका कार्यकाल ख़त्म हो चुका था और उन पर दो जाँचें चल रही थीं। उन्होंने कहा, 'चौधरी जी, उस दिन लगा था कि लौटाऊँगा तो ठेकेदार नाराज़ होगा, और गाँव में अकेला वही आदमी है जिसके पास मिक्सर मशीन है।' उन्होंने लिफ़ाफ़ा रख लिया। पैसे से ज़्यादा महँगा वह फ़ैसला पड़ा।

अगले काम पर ठेकेदार ने नाप में चार मीटर का फ़र्क़ रखा। दिनेश ने टोका। ठेकेदार ने कुछ नहीं कहा, बस मुस्कुराए। उस मुस्कान का मतलब दोनों जानते थे। तीसरे काम तक यह फ़र्क़ ग्यारह मीटर हो गया था, और लिफ़ाफ़ा ₹6,000 से ₹14,000 का।

कमीशन का असली दाम रुपया नहीं, आपकी आवाज़ है। जिस दिन आपने पहला लिफ़ाफ़ा रखा, उस दिन से आप किसी भी माप पुस्तिका पर आपत्ति नहीं लिख सकते, क्योंकि लिखने वाला जानता है कि आपके पास छिपाने को कुछ है। और यह बात सिर्फ़ ठेकेदार नहीं जानता। जो लिफ़ाफ़ा ठेकेदार देता है, उसकी ख़बर उसी हफ़्ते ब्लॉक तक पहुँचती है, क्योंकि ठेकेदार को वहाँ भी 'मिठाई' बाँटनी होती है। फिर ब्लॉक से फ़ोन आने लगते हैं। विनम्र, बहुत विनम्र।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *शाजापुर, 2016 से 2021। पाँच साल में दिनेश के कार्यकाल में उन्नीस निर्माण काम हुए, सब एक ही ठेकेदार के। 2021 में एक वार्ड पंच की शिकायत पर तकनीकी जाँच हुई। नौ कामों में माप कम निकला, कुल अंतर ₹4,70,000 का। वसूली का नोटिस सरपंच, सचिव और उपयंत्री तीनों के नाम गया। ठेकेदार का नाम उसमें नहीं था, क्योंकि भुगतान पर उसके दस्तख़त नहीं, सरपंच के थे। जाँच अधिकारी के सामने दिनेश ने कहा कि उन्होंने नाप पर कई बार आपत्ति की थी। उनसे पूछा गया, 'लिखित में?' जवाब नहीं था।*

मुझे ठीक-ठीक नहीं पता कि उन पाँच सालों में दिनेश के हाथ कुल कितना आया। उन्होंने कभी नहीं बताया, और मैंने पूछा भी नहीं। मेरा अंदाज़ा है कि वसूली की रक़म का एक-चौथाई भी नहीं। यही इस जाल की सबसे बुरी बात है: छोटा लेने वाला बड़ा चुकाता है।

अब व्यावहारिक बात। कमीशन का प्रस्ताव लगभग हमेशा इन चार रूपों में आता है, और इन्हें पहचानना आधी लड़ाई है:

- **'मिठाई' या 'चाय-पानी'**, भुगतान के ठीक बाद, बिना माँगे।
- **'ऊपर देना पड़ता है'**, यानी कोई कहे कि स्वीकृति के लिए ब्लॉक में प्रतिशत तय है और आप बस बीच में हैं।
- **बढ़ा हुआ प्राक्कलन**, जिसमें फ़ालतू मद जोड़कर 'आपका हिस्सा' पहले से रख दिया जाता है।

- **रिश्तेदार का नाम**, जब कोई कहे कि सामग्री आपके साले की दुकान से ले लेंगे, बात घर में ही रहेगी।

पहले लिफ़ाफ़े को लौटाने का सबसे सुरक्षित तरीक़ा अकेले में नहीं, किसी के सामने लौटाना है। झालावाड़ के एक सरपंच ने 2019 में यही किया। ठेकेदार ने लिफ़ाफ़ा रखा, सरपंच ने सचिव और एक वार्ड पंच को बुलाया, और सबके सामने कहा, 'भाई साहब, आपका कुछ छूट गया है।' कोई भाषण नहीं, कोई शिकायत नहीं। उस ठेकेदार ने उस पंचायत में फिर कभी नाप में फ़र्क़ नहीं रखा। शायद डर से। शायद इसलिए कि अब उसे पता था कि इस सरपंच की माप पुस्तिका पर आपत्ति लिखी जाएगी, और लिखने वाले का मुँह बंद करने का कोई रास्ता नहीं।

दिनेश के घर की अलमारी में आज भी वह पहला लिफ़ाफ़ा रखा है। ख़ाली। उन्होंने बताया कि नोटिस आने के बाद उसे फेंकने का मन नहीं हुआ।

पहले काग़ज़, फिर घबराहट

संकट तीन शक्लों में आता है, और तीनों की भाषा अलग है। **अविश्वास प्रस्ताव** वार्ड पंचों की राजनीति है। **निलंबन या हटाने का नोटिस** सरकार की प्रशासनिक कार्रवाई है। **वसूली नोटिस** पैसे का हिसाब है, और FIR उसका सबसे कड़वा रूप। मैंने देखा है कि ज़्यादातर सरपंच तीनों पर एक जैसी प्रतिक्रिया देते हैं: विधायक को फ़ोन। यह सबसे ग़लत पहला क़दम है।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *अविश्वास प्रस्ताव के लिए कितने सदस्यों के दस्तख़त चाहिए, पास होने को कितना बहुमत, और कार्यकाल के पहले कितने महीनों तक यह लाया ही नहीं जा सकता, यह सब आपके राज्य का पंचायती राज अधिनियम तय करता है। कुछ राज्यों में प्रस्ताव गिरने के बाद एक तय अवधि तक दोबारा नहीं आ सकता। हटाने और निलंबन के आधार (कर्तव्य में लापरवाही, दुराचरण, अदालत से सज़ा, कुछ राज्यों में दो-संतान नियम) भी राज्य-दर-राज्य अलग हैं। मध्य प्रदेश में सरपंचों के बीच ये 'धारा 40' और 'धारा 92' के नोटिस कहलाते हैं; राजस्थान, बिहार या उत्तर प्रदेश में धाराएँ अलग हैं। अपना अधिनियम निकालिए, धारा पर निशान लगाइए। सुनी-सुनाई पर मत चलिए।*

हर नोटिस में एक बात लगभग तय होती है: **जवाब की समय-सीमा**। सात दिन, पंद्रह दिन, कभी तीस। जो सरपंच इस तारीख़ को चूक जाता है, उसके ख़िलाफ़ फ़ैसला अक्सर एकतरफ़ा होता है, और बाद में अपील में यह साबित करना पड़ता है कि आपने सुनवाई क्यों छोड़ी।

नोटिस आए तो यह क्रम रखिए:

1. नोटिस मिलने की तारीख़ उसी पर लिखिए और उसकी तीन फ़ोटोकॉपी कराइए।

2. जिन रजिस्टरों, माप पुस्तिकाओं या भुगतान-आदेशों का उसमें ज़िक्र है, उनकी प्रमाणित प्रतियाँ लिखित आवेदन देकर माँगिए। न मिलें तो RTI लगाइए।
3. अपना जवाब बिंदुवार लिखिए, हर आरोप के सामने एक दस्तावेज़। भावुक पन्ने नहीं।
4. व्यक्तिगत सुनवाई की माँग लिखित में कीजिए।
5. FIR की आशंका हो तो उसी हफ़्ते वकील से मिलिए; अग्रिम ज़मानत का रास्ता तभी खुला रहता है।
6. 'मामला निपटाने' के लिए किसी को एक रुपया मत दीजिए। वह रसीद कभी नहीं मिलती।

अब वह क़िस्सा जो मैं इस अध्याय के लिए बचाकर रखे था। 2018 में राजसमंद ज़िले की एक पंचायत की सरपंच लीला बाई को मनरेगा के एक खेत-तालाब पर ₹2,15,000 की वसूली का नोटिस मिला। आरोप था कि मस्टर रोल में 64 मज़दूरों में से 23 फ़र्ज़ी हैं। शिकायत एक हारे हुए उम्मीदवार के भतीजे ने की थी। लीला बाई रोती हुई जयपुर नहीं आईं। वे पंचायत भवन की अलमारी तक गईं।

उस काम का सामाजिक अंकेक्षण छह महीने पहले हुआ था। ग्राम सभा में हर मज़दूर का नाम पढ़ा गया था, और जो मौजूद था उसने अपने नाम के आगे अँगूठा या दस्तख़त किया था। रजिस्टर में 58 निशान थे। बाक़ी छह के आगे लिखा था कि वे गुजरात में मज़दूरी पर गए हैं, और उनके परिवार वालों ने गवाही दी थी। सामाजिक अंकेक्षण की टीम की रिपोर्ट भी फ़ाइल में थी, उसकी तारीख़ और टीम के तीन सदस्यों के नाम के साथ।

सुनवाई में जाँच अधिकारी ने रजिस्टर पलटा, कुछ देर चुप रहे, और बोले, 'बाई सा, ये सभा आपने करवाई थी या अपने आप हुई?' लीला बाई ने कहा, 'साहब, करवाई तो मैंने, पर अँगूठे गाँव वालों के हैं।' नोटिस चार महीने बाद वापस हुआ। जिन 23 नामों को फ़र्ज़ी कहा गया था, उनमें से 21 ने अपने जॉब कार्ड लेकर लिखित बयान दिए।

मैं यह नहीं कहूँगा कि हर बार ऐसा ही होता है। मुझे दो ऐसे मामले याद हैं जहाँ अंकेक्षण का रजिस्टर था, फिर भी वसूली बनी रही, क्योंकि माप पुस्तिका में गड़बड़ थी और अंकेक्षण उस तक पहुँचा ही नहीं था। सामाजिक अंकेक्षण उतनी ही दूर तक बचाता है जितनी दूर तक वह ईमानदारी से किया गया था।

लीला बाई का कार्यकाल 2020 में ख़त्म हुआ। आख़िरी साल की जनवरी में उन्होंने मुझे फ़ोन किया था। आवाज़ में घबराहट नहीं थी, बस हिसाब था: 'चौधरी जी, आचार संहिता लगने में कितना टाइम बचा है? तीन काम अधूरे हैं, दो के भुगतान अटके हैं, और अगला सरपंच कौन होगा, पता नहीं।'

अध्याय 12

पाँचवाँ साल

आचार संहिता से पहले

तारीख़ मुझे भी नहीं पता थी। मैंने लीला बाई से यही कहा, और यह सच था: पंचायत चुनाव की तारीख़ राज्य निर्वाचन आयोग तय करता है, और आयोग अपना कैलेंडर किसी प्रशिक्षक को फ़ोन करके नहीं बताता। पिछले बीस साल में मैंने आचार संहिता को तय समय पर लगते भी देखा है और छह महीने खिसकते भी। इसलिए मेरी सलाह हमेशा एक ही रहती है। **मान लीजिए कि आचार संहिता अगले महीने लग रही है, और उसी हिसाब से काम कीजिए।** अगर वह देर से लगे तो आपको कुछ हफ़्ते मुफ़्त में मिल गए।

लीला बाई ने उसी शाम एक काग़ज़ पर तीनों अधूरे काम लिखे और हर काम के आगे तीन बातें दर्ज कीं: माप पुस्तिका में आख़िरी नाप कब हुआ, कितना भुगतान हो चुका, और कितना बाक़ी है। नतीजा कुछ यूँ निकला:

- **खड़ंजा, भील बस्ती:** काम लगभग 80 प्रतिशत, नाप दिसंबर में हुआ था, ₹64,000 का भुगतान बाक़ी।
- **आँगनवाड़ी की चारदीवारी:** नींव भरी गई थी, बस। ₹1,20,000 की स्वीकृति में से ₹22,000 ख़र्च।
- **श्मशान का टीनशेड:** कार्यादेश जारी, पर ज़मीन पर एक ईंट भी नहीं।

तीसरी पंक्ति देखकर उन्होंने ख़ुद कहा, 'ये तो अगले वाले के लिए छोड़ना पड़ेगा।' यह फ़ैसला आसान नहीं था। टीनशेड की माँग उनके अपने मोहल्ले से थी, और चुनाव से पहले किसी भी सरपंच का मन करता है कि हर पत्थर पर अपना नाम छोड़ जाए।

जल्दबाज़ी की क़ीमत

2015 में बाड़मेर ज़िले की एक पंचायत में मैं ऑडिट रिपोर्ट पढ़ने गया था। वहाँ के सरपंच ने आचार संहिता लगने से नौ दिन पहले सात कार्यादेश एक साथ जारी किए थे, कुल ₹11,40,000 के। चार कामों की तकनीकी स्वीकृति फ़ाइल में थी ही नहीं। सचिव ने बताया कि 'JEN साहब बाद में कर देंगे' वाला भरोसा था। JEN साहब का तबादला चुनाव से पहले हो गया। नए सरपंच ने उन कामों को हाथ लगाने से मना कर दिया, ठेकेदार ने अधूरी सामग्री का बिल पंचायत पर ठोका, और पूर्व सरपंच के नाम ₹3,10,000 की आपत्ति आज भी खुली है।

आख़िरी महीनों में तीन चीज़ें सबसे ज़्यादा फिसलती हैं:

1. बिना नाप के भुगतान, क्योंकि 'काम तो हो ही गया है'।
2. एक ही बैठक में दस-बारह बिलों पर दस्तख़त, बिना वाउचर मिलाए।
3. ऐसे नए कार्यादेश, जिनकी स्वीकृति अधूरी है और जो आचार संहिता के बीच में लटक जाएँगे।

> ***क़ानून क्या कहता है*** *आचार संहिता के दौरान पंचायत क्या कर सकती है और क्या नहीं, यह राज्य निर्वाचन आयोग के आदेश से तय होता है। आम तौर पर नए कामों की स्वीकृति और नए कार्यादेश रुक जाते हैं, जबकि जिन कामों का कार्यादेश पहले जारी हुआ हो और ज़मीन पर काम शुरू हो चुका हो, वे कई राज्यों में जारी रह सकते हैं। कुछ राज्यों में भुगतान के लिए भी अलग अनुमति चाहिए। आयोग का ताज़ा आदेश ब्लॉक से लिखित में मँगवाइए। पिछले चुनाव का आदेश इस बार लागू हो, यह ज़रूरी नहीं।*

लंबित भुगतान पहले

लीला बाई ने सबसे पहले खड़ंजे का बचा हुआ काम पूरा करवाया, अंतिम नाप JEN से करवाया और ₹64,000 का भुगतान फ़रवरी के दूसरे हफ़्ते में PFMS से निकाला। चारदीवारी के लिए उन्होंने एक अलग नोट लिखा: कितनी नींव भरी गई, कितनी ईंटें स्टॉक रजिस्टर में दर्ज हैं, कौन-सा बिल अभी चुकाना बाक़ी है। उस नोट पर सचिव और दो वार्ड पंचों के दस्तख़त लिए गए।

टीनशेड का कार्यादेश उन्होंने ग्राम सभा के प्रस्ताव से स्थगित करवाया, ताकि अगला सरपंच उसे रद्द करे या आगे बढ़ाए, पर किसी अनकहे वादे के बोझ के साथ नहीं।

मार्च की एक दोपहर उन्होंने मुझे उस काग़ज़ की फ़ोटो वॉट्सऐप पर भेजी। पहली दो पंक्तियों पर हरी स्याही से निशान थे। तीसरी पंक्ति के आगे बस इतना लिखा था: 'अगले के हवाले'।

अपनी पंचायत का आईना

उसी हफ़्ते लीला बाई ने एक और काग़ज़ भेजा। यह पंचायत विकास सूचकांक (अंग्रेज़ी में Panchayat Advancement Index, जिसे ब्लॉक वाले 'PAI' कहते हैं) की उनकी पंचायत वाली शीट थी। साथ में एक पंक्ति: 'चौधरी जी, हम "परफ़ॉर्मर" हैं। ये अच्छा है या बुरा?'

यह सूचकांक पंचायती राज मंत्रालय ने देश की सभी ग्राम पंचायतों को एक ही पैमाने पर नापने के लिए बनाया है। आधार वही नौ स्थानीय विषय हैं जिनसे आपने GPDP बनाई थी: ग़रीबी-मुक्त और आजीविका वाला गाँव, स्वस्थ गाँव, बाल-हितैषी गाँव, पर्याप्त पानी, स्वच्छ और हरा गाँव, आत्मनिर्भर बुनियादी ढाँचा, सामाजिक रूप से सुरक्षित गाँव, सुशासन, और महिला-हितैषी गाँव। हर विषय के नीचे दर्जनों संकेतक हैं, और अंक जोड़कर पंचायत को पाँच श्रेणियों में से किसी एक में रखा जाता है: अचीवर, फ़्रंट रनर, परफ़ॉर्मर, एस्पिरेंट और बिगिनर।

मैंने लीला बाई को सच बताया। परफ़ॉर्मर बीच की श्रेणी है, और पहली गिनती में देश की ज़्यादातर पंचायतें इसी के आसपास निकलीं। सबसे ऊपर वाली श्रेणी में, जहाँ तक मुझे जानकारी मिली, एक भी पंचायत नहीं पहुँची। इसलिए शर्माने की बात नहीं थी। पर इतराने की भी नहीं।

अंक कौन भरता है

असली सवाल मैंने उनसे यह पूछा: 'शीट में जो आँकड़े हैं, वे भरे किसने?'

जवाब वही था जिसका मुझे डर था। सचिव ने, पोर्टल पर, एक दोपहर में।

2024 में सीहोर ज़िले की एक पंचायत में मैंने यही शीट खोलकर देखी थी। 'स्वस्थ गाँव' वाले हिस्से में संस्थागत प्रसव शत-प्रतिशत दर्ज था। उसी पंचायत की ANM के रजिस्टर में पिछले साल के दो प्रसव घर पर हुए दिखते थे, एक तो नाले पार वाले टोले में, बारिश की रात। सचिव ने कहा, 'साहब, ऊपर से फ़ॉर्मेट आया था, हमने भर दिया।' उन्होंने कुछ छिपाया नहीं था। बस किसी ने उनसे ANM का रजिस्टर देखने को कहा ही नहीं था।

सच कहूँ तो शुरू में मुझे इस सूचकांक पर भरोसा नहीं था। मुझे लगता था कि यह भी उन रैंकिंगों जैसा निकलेगा जिनमें पोर्टल पर हरा निशान लगाने वाली पंचायत आगे और ज़मीन पर काम करने वाली पीछे रह जाती है। मेरी राय पूरी तरह बदली नहीं है, पर थोड़ी खिसकी है। अगर आँकड़े ईमानदारी से भरे जाएँ तो यह शीट पहली बार पंचायत को बताती है कि वह किस खाने में कमज़ोर है। ख़तरा सूचकांक में नहीं, उसे भरने के तरीक़े में है।

पाँच सवाल, जो पोर्टल नहीं पूछता

सूचकांक के अलावा मैं हर पाँचवें साल के सरपंच से एक घंटा अकेले बैठकर ये पाँच सवाल लिखवाता हूँ। जवाब काग़ज़ पर हों, मन में नहीं:

1. पिछली चार अनिवार्य ग्राम सभाओं में औसत उपस्थिति कितनी रही, और कितनी बार कोरम पूरा हुआ?
2. आपकी पंचायत में कितनी स्थायी समितियाँ काग़ज़ पर हैं, और उनमें से कितनी की पिछले छह महीने में बैठक हुई?
3. पिछले ऑडिट के कितने पैरा अब भी खुले हैं, और हर पैरे का जवाब किस फ़ाइल में है?
4. अपनी आय (गृह कर, किराया, नीलामी) पहले साल कितनी थी और इस साल कितनी है?
5. अगर आप कल बीमार पड़ जाएँ, तो कौन-सा काम रुक जाएगा क्योंकि उसकी जानकारी सिर्फ़ आपके दिमाग़ में है?

पाँचवाँ सवाल सबसे ज़्यादा चुभता है। लीला बाई ने उस पर लिखा: 'नल-जल का बिजली बिल, जल समिति का बैंक खाता, और श्मशान वाली ज़मीन का पटवारी से झगड़ा।' तीनों बातें उनके फ़ोन में थीं, किसी रजिस्टर में नहीं।

अगले मंगलवार उन्होंने सचिव, ANM और आँगनवाड़ी वाली बहनजी को एक साथ बुलाया और सूचकांक की शीट मेज़ पर रख दी। 'स्वस्थ गाँव' वाले खाने में तीन आँकड़े बदले गए। अंक घट गए। लीला बाई ने संशोधित शीट की फ़ोटो भेजी, और नीचे लिखा: 'अब परफ़ॉर्मर से नीचे खिसक गए, पर अबकी बार सही खिसके हैं।'

फ़ोन से रजिस्टर तक

लीला बाई ने अगले दस दिन उन तीन बातों को फ़ोन से निकालकर काग़ज़ पर उतारने में लगाए। नल-जल के बिजली कनेक्शन का उपभोक्ता नंबर, बिल आने की तारीख़ और पिछले बारह महीनों का भुगतान अब एक पतले रजिस्टर में है, जिसके कवर पर मोटे अक्षरों में 'नल-जल पंजी' लिखा है। जल समिति के खाते में दो दस्तख़त चलते थे: उनका अपना और उनके भतीजे का, जो समिति का कोषाध्यक्ष था। उन्होंने बैंक में आवेदन देकर दस्तख़त का अधिकार व्यक्ति के नाम से हटाकर पद के नाम पर करवाया, यानी 'समिति अध्यक्ष' और 'सचिव', जो भी हों। श्मशान वाली ज़मीन के झगड़े की एक फ़ाइल बनी, जिसमें पटवारी के तीन पत्र तारीख़ के क्रम से लगे हैं और सबसे ऊपर एक पन्ने का नोट है कि बात कहाँ अटकी है।

यह मामूली काम लगता है। है नहीं।

> ***कच्ची फ़ाइल*** *सवाई माधोपुर ज़िले की एक पंचायत में 2015 से 2020 तक एक सरपंच ने बरसाती पानी रोकने का बढ़िया काम किया। जल समिति बनी, उसके खाते में ₹1,40,000 जमा हुए, और गाँव वाले उन्हें 'पानी वाले सरपंच जी' कहने लगे। खाते के दोनों दस्तख़तकर्ता वे ख़ुद और उनके एक रिश्तेदार थे। 2020 में वे चुनाव हार गए। नई सरपंच ने समिति की बैठक बुलाई तो पता चला कि खाता चलाने का अधिकार किसी के पास नहीं है। पूर्व सरपंच ने दस्तख़त बदलवाने में 'समय निकाला', जो डेढ़*

साल का निकला। इस बीच खाता निष्क्रिय हो गया और अगले ऑडिट में पैरा बना कि सार्वजनिक राशि बिना उपयोग के पड़ी है। जवाब किससे माँगा गया, यह मुझे पक्का नहीं पता। पर दो गर्मियाँ उन एनीकटों की मरम्मत नहीं हुई।

तुलना के लिए दो राज्य

2019 में मैं महाराष्ट्र के अहमदनगर ज़िले की एक ग्राम पंचायत गया था। भवन की बाहरी दीवार पर पूरे साल का कैलेंडर पेंट किया हुआ था: कौन-सी ग्राम सभा किस तारीख़ को, कौन-सी समिति हर महीने के किस दिन बैठेगी। सरपंच पिछले साल बदल चुके थे। मैंने उपस्थित एक बुज़ुर्ग से पूछा कि नए सरपंच ने कुछ बदला क्या। वे बोले, 'साहब, तारीख़ दीवार पर है। बदलेगा तो पेंट करवाना पड़ेगा।' मुझे यह जवाब आज भी पसंद है। नियम किसी के मन में नहीं, दीवार पर लिखा हो तो उसे तोड़ने में मेहनत लगती है।

केरल में, 2014 की त्रिशूर यात्रा के दौरान, मैंने वार्ड सभाओं और योजना के 'कार्यकारी समूह' देखे थे। ये विषयवार समूह हैं, जिनमें स्थानीय शिक्षक, नर्स, किसान और स्वयं सहायता समूह की औरतें बैठती हैं, और जो हर साल योजना का मसौदा तैयार करते हैं। पंचायत अध्यक्ष बदलते रहते हैं, समूहों की बनावट वैसी ही रहती है। ईमानदारी से कहूँ तो मुझे शक है कि यह ढाँचा राजस्थान या बिहार में ज्यों-का-त्यों चल पाएगा। वहाँ दशकों की साक्षरता और राज्य का सहारा पीछे खड़ा है। पर एक हिस्सा उठाया जा सकता है: योजना बनाने वाले लोग सरपंच के चुने हुए नहीं, ग्राम सभा के चुने हुए हों।

समितियाँ जो आपके बिना बैठें

पाँचवें साल में हर स्थायी समिति के लिए ये चार चीज़ें तय कर दीजिए:

1. बैठक का निश्चित दिन, जैसे हर महीने का पहला गुरुवार, ग्राम सभा के प्रस्ताव में दर्ज।
2. समिति का अलग कार्यवाही रजिस्टर, पंचायत की अलमारी में, किसी के घर में नहीं।
3. अध्यक्ष सरपंच के अलावा कोई और, ख़ासकर निर्माण, जल और शिक्षा समितियों में।
4. जिस समिति का बैंक खाता है, उसमें दस्तख़त का अधिकार पद के नाम पर हो, व्यक्ति के नाम पर नहीं।

चूरू वाले महावीर जी ने यह सूची पढ़कर कहा था, 'चौधरी जी, ये सब कर दिया तो मेरी ज़रूरत क्या रहेगी?' मैंने कहा कि ठीक यही बात है।

अप्रैल के आख़िरी हफ़्ते में लीला बाई अपनी बेटी के पास उदयपुर गई थीं। उसी गुरुवार जल समिति की बैठक हुई, उनके बिना। उन्हें किसी ने फ़ोन नहीं किया। शाम को कोषाध्यक्ष ने कार्य-वाही रजिस्टर के पन्ने की फ़ोटो भेजी: सात सदस्य मौजूद, मोटर की सर्विसिंग के लिए ₹2,300

स्वीकृत, अगली बैठक मई का पहला गुरुवार। लीला बाई ने वह फ़ोटो मुझे आगे भेज दी, बिना एक भी शब्द लिखे।

चार्ज सौंपना: वही अलमारी, इस बार पूरे पन्ने

कमला देवी का कार्यकाल पूरा होने में तीन हफ़्ते बचे थे जब उन्होंने मुझे भीलवाड़ा बुलाया। फ़ोन पर बस इतना कहा, 'चौधरी जी, चार्ज देना है। आप बैठ जाना, बोलना कुछ मत।' मैं गया। पंचायत भवन वही था, बरामदे की वही टूटी जाली, और भीतर वही लोहे की हरी अलमारी जिसके सामने वे पाँच साल पहले ख़ाली हाथ खड़ी थीं।

नए सरपंच तीस-बत्तीस साल के एक लड़के थे, नाम यहाँ गोपाल मान लीजिए, जो पहली बार चुने गए थे। साथ में सचिव, दो वार्ड पंच और गोपाल के एक चाचा, जो बिना बुलाए आए थे और दरवाज़े के पास कुर्सी खींचकर बैठ गए। कमला देवी ने अलमारी खोली और एक पतली फ़ाइल सबसे पहले निकाली। उस पर हाथ से लिखा था: 'चार्ज-सूची'।

सूची में बारह मद थे, वही बारह जो वे पाँच साल से हर नए सरपंच को गिनवाने की सलाह देती आई थीं। पर उनकी अपनी सूची में हर मद के आगे तीन बातें और लिखी थीं:

1. कैश बुक: आख़िरी प्रविष्टि की तारीख़, अंतिम शेष, और उसी दिन की बैंक पासबुक से मिलान का अंक।
2. अधूरे काम: चार, हर एक की माप पुस्तिका का क्रमांक और आख़िरी नाप की तारीख़।
3. लंबित उपयोगिता प्रमाणपत्र: एक, ₹2,10,000 का, जो ब्लॉक में जमा हो चुका था, पावती की प्रति साथ।
4. खुले ऑडिट पैरा: दो, और हर पैरे के आगे उस फ़ाइल का नाम जिसमें जवाब रखा है।
5. उनके अपने DSC को निष्क्रिय करवाने और बैंक से दस्तख़त-अधिकार हटवाने के आवेदन की प्रति, जिस पर बैंक की मुहर थी।
6. तीन स्थायी समितियों के कार्यवाही रजिस्टर, और अगली बैठकों की तारीख़ें।

फिर उन्होंने कैश बुक गोपाल के आगे रखी। गोपाल ने उसे उठाया, दो पन्ने पलटे और बंद करने लगे।

'बाई सा, आप पर पूरा भरोसा है।'

'भरोसा मत करो, भैया। गिनो।'

चाचा दरवाज़े के पास से हँसे। कमला देवी ने उधर देखा भी नहीं। गोपाल ने गिनना शुरू किया, और सचिव साथ में मिलाते गए। पहले दिन ही कमला देवी ने हर पन्ने के कोने पर क्रमांक की मुहर लगवाई थी और पहले पन्ने पर लिखवाया था कि रजिस्टर में कुल कितने पन्ने हैं। गिनती में चालीस मिनट लगे। बीच में बिजली गई, तो गोपाल ने फ़ोन की टॉर्च जलाकर गिनती जारी रखी। मैं चुप बैठा रहा, जैसा कहा गया था।

एक बात मुझे उस दिन पता चली जो मैंने पहले नहीं सोची थी। फ़ाइल के सबसे ऊपर एक अलग पन्ना था, उनके अपने हाथ का लिखा। उसमें 2011 के उन चौदह ग़ायब पन्नों का पूरा ब्योरा था: किस तारीख़ को रजिस्टर लौटा, किस पन्ने से किस पन्ने तक कटे थे, किस-किस ऑडिट में यह सवाल उठा और हर बार क्या जवाब दिया गया। आख़िरी पंक्ति थी: 'यह पैरा मेरे कार्यकाल से पहले का है। मेरे बाद वाले सरपंच से इसका जवाब न माँगा जाए।' वह पैरा पाँच साल में कभी बंद नहीं हुआ। आज भी बंद हुआ है या नहीं, मुझे पक्का नहीं पता। पर अब कम से कम वह किसी तीसरे आदमी के सिर नहीं जाएगा।

गिनती पूरी हुई। सूची के नीचे चार दस्तख़त हुए: कमला देवी, गोपाल, सचिव और एक वार्ड पंच। दूसरे वार्ड पंच ने अँगूठा लगाया। कमला देवी ने सूची की दो प्रतियाँ और करवाईं, एक अलमारी में, एक गोपाल के हाथ में, एक अपने झोले में।

फिर उन्होंने अलमारी की चाबी निकाली। उसमें एक लाल धागा बँधा था। चाबी गोपाल की हथेली पर रखते हुए उन्होंने इतना ही कहा, 'ये धागा मत खोलना। खोई तो दूर से दिख जाएगी।'

चाचा उठकर बाहर चले गए। गोपाल ने कैश बुक फिर खोली, आख़िरी भरे पन्ने के नीचे एक लकीर खींची, और उसके नीचे अगली तारीख़ डाली। कलम रुकी। उन्होंने कमला देवी की ओर देखा।

'पहली प्रविष्टि क्या लिखूँ, बाई सा?'

कमला देवी झोला कंधे पर टाँग चुकी थीं। बरामदे की टूटी जाली के पास रुककर बोलीं, 'जो सचिव जी बोलें, वो नहीं। जो पासबुक में है, वो।'

अलमारी के भीतर कैश बुक के आख़िरी पन्ने के कोने पर मुहर का अंक साफ़ पढ़ा जा सकता था: 200। उससे पहले के एक सौ निन्यानवे पन्ने भी अपनी जगह थे।

लेखक के बारे में

सुशील चौधरी 'गाँव की कुर्सी: सरपंच के अधिकार, कर्तव्य और काम करने की असली विधि' के लेखक हैं। उनकी रुचि भारत के ग्रामीण स्थानीय शासन, पंचायती राज व्यवस्था और ज़मीनी नेतृत्व में है। इस किताब में उन्होंने संविधान, राज्य अधिनियमों, सरकारी योजनाओं और पंचायत के रोज़मर्रा के कामकाज को सरल, व्यावहारिक भाषा में एक साथ रखने का प्रयास किया है, ताकि सरपंच, वार्ड पंच, पंचायत सचिव और जागरूक नागरिक इसे अपने काम में सीधे उपयोग कर सकें। उनका मानना है कि मज़बूत ग्राम सभा और पारदर्शी हिसाब ही किसी पंचायत की सबसे बड़ी पूँजी हैं।